प्रकाशक—
श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार
आशा निकेतन
१२ ए, टैप रोड, लाहौर

मुद्रक—
श्रीकृष्ण दीक्षित
बाम्बे मशीन प्रेस
मोहनलाल रोड, लाहौर

भूमिका

पहले दुनिया यदि धीरे-धीरे खिसका करती थी तो अब वह भागने लगी है। उसमें प्रतिदिन परिवर्तन होता रहता है। कहा जाता है कि पहले ज़माने के लोग आजकल के लोगों की अपेक्षा शारीरिक दृष्टि से अधिक स्वस्थ और सुगठित होते थे और उनकी आयु भी बड़ी होती थी। मुमकिन है कि यह बात ठीक हो। परन्तु पहले एक मनुष्य अपने सौ बरस के जीवन में जितना सुख-दुख अनुभव करता था और उसे जितना ज्ञान प्राप्त होता था, आज का मनुष्य अपनी आयु के पचास वर्षों में ही उसकी अपेक्षा कई गुना ज्ञान और अनुभव प्राप्त कर लेता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि आज के ५० वर्षों के जीवन में पहले के ५०० वर्षों का जीवन व्यतीत किया जा रहा है।

दुनिया सचमुच दौड़ रही है। कल के आविष्कार आज पुराने पड़ गए हैं और कौन कह सकता है कि जिन बातों को आज हम एक 'चमत्कार' गिन रहे हैं, उन्हें कल एक बहुत ही मामूली बात नहीं समझा जाने लगेगा। सोचने वालों के लिए यह भी एक समस्या है कि इस वैज्ञानिक दौड़ का अन्त कहां जा कर होगा।

पुराने ज़माने में लोग भौतिक उन्नति की अपेक्षा आत्मिक उन्नति को अधिक महत्ता देते थे। वे लोग बाहर के जगत का विश्लेषण करने की अपेक्षा अपने अन्दर के जगत का पर्यवेक्षण करना अधिक पसन्द करते थे। उप-

निषदों के जिज्ञासु नचिकेता को जब उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर मृत्यु देवता ने यह वर दिया कि वह चाहे जो चीज़ मांग सकता है; हाथी, घोड़े, महल, धन, सभी कुछ उसे मिल सकता है, तब नचिकेता ने इस महान प्रलोभन का जो उत्तर दिया उसे प्राचीन भारत के प्रायः सभी विचारकों की मनोवृत्ति का परिचायक समझा जा सकता है। नचिकेता ने मृत्युदेवता से कहा था—

"किं तेनाहं कुर्यां येन नाहममृतः स्याम् ?"

—मैं उस चीज़ को लेकर क्या करूँ, जिसे लेकर भी मैं अमर नहीं हो जाता ?

प्राचीन ऋषियों को ज्ञात था कि मनुष्य के लिए मृत्यु को जीत सकना सम्भव नहीं है; परन्तु मृत्यु को न जीत सकते हुए भी मृत्यु के डर को ज़रूर जीता जा सकता है और मृत्यु के डर को जीत लेना मौत को जीत लेने के बराबर है।

वर्तमान युग का ज्ञानी पुरुष भौतिक विज्ञान की सहायता से मौत के डर को जीतने का प्रयत्न कर रहा है। और यह हमें स्वीकार करना चाहिए कि आज तक विज्ञान के जो तत्त्व मनुष्य को ज्ञात हो गए हैं, उनके कारण उसके ज्ञान का आधार पहले मनुष्यों के ज्ञान के आधार की अपेक्षा अधिक दृढ़ हो गया है।

संसार में आज जो लहरें चल रही हैं। राजनीति, विज्ञान, समाज शास्त्र आदि के सम्बन्ध में जो नए-नए परी-

तथा आज हो रहे हैं, उनसे परिचिति प्राप्त किए बिना कोई मनुष्य अब पूर्णतया सुशिक्षित नहीं कहला सकता। पाश्चात्य देशों में इस बात की आवश्यकता को बहुत समय से स्वीकार कर लिया गया है कि विद्यार्थियों को बचपन ही से सामान्य ज्ञान की शिक्षा देने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। हमारे देश में भी आजकल इस बात की आवश्यकता अनुभव की जा रही है। संसार के भावी नागरिकों के लिए यह आवश्यक है कि वे संसार की प्रगति से परिचित रहें।

हिन्दी में अभी तक सामान्य ज्ञान देनेवाली पुस्तकों का लगभग अभाव ही है, उस अभाव की पूर्ति के लिए तो नहीं, परन्तु सामान्य ज्ञान की प्रारम्भिक शिक्षा देने के लिए मैंने यह पुस्तक लिखी है।

इस सम्बन्ध में सब से बड़ी दिक्कत राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक शब्दों की है। हिन्दी में इस समय तक यह निर्णय पूर्णरूप से नहीं हो पाया कि अँगरेज़ी के किस पारिभाषिक शब्द के लिए हिन्दी में कौन-सा शब्द प्रयुक्त किया जाय। ख़ासतौर से आर्थिक और वैज्ञानिक शब्दों की तो हिन्दी में बहुत ही कमी है। फिर भी मैंने प्रयत्न किया है कि यह पुस्तक इतनी सरल भाषा और इतनी सुगम शैली में लिखी जाय कि इस विषय के प्रारम्भिक विद्यार्थी इससे लाभ उठा सकें।

१२ सितम्बर १९३६
आशा निकेतन
लाहौर

—चन्द्रगुप्त विद्यालंकार

विषय-सूची

आजकल

लेखक की रचनाएँ—

कहानी संग्रह—

१. अमावस

२. भय का राज्य

३. चन्द्रकला

नाटक—

१. रेवा

२. अशोक

३. काफ़िर

अन्य—

१. आजकल

अनुवाद—

१. संसार की सर्वश्रेष्ठ कहानियां

२. पाप (चैख़व)

३. चरागाह (तुर्गनेव)

४. विवाह की कहानियां (हार्डी)

(१)

आज की दुनिया

पुराने ज़माने का कोई मनुष्य यदि आज किसी तरह अचानक उसी रूप में ज़िन्दा हो उठे, तो वह इस दुनिया को देख कर इतना हैरान हो जायगा कि शायद वह हैरानी उसे जीवित ही न रहने दे। वह चकित होकर देखेगा कि बड़े-बड़े शहरों में आसमान को छूने वाले मकान है और उनके बीचोंबीच खूब चौड़ी, पक्की-पक्की सड़कें हैं। इन सडकों पर सैकडों-हजारों मनुष्य बड़ी तेज़ी से इधर-उधर आ-जा रहे हैं। सब से अधिक आश्चर्य उसे यह देख कर होगा कि विशाल नगरों में बिजली से चलने वाली बड़ी-बड़ी रेलगाड़ियाँ, ट्रामकार, बस, मोटरकार आदि न जाने कौन-कौन सी सवारियाँ सैकड़ों की संख्या में इधर से उधर भागी चली जा रही हैं और वे सब की सब उसी के समान मनुष्यों से खचाखच भरी हुई हैं। आज

की दुनिया से पूरी तरह अपरिचित वह आदमी हैरानी से सोचेगा कि आखिर ये सब, ये सैकड़ों-हजारों मेरे ही समान दिखाई देने वाले मनुष्य इतनी तेज़ी के साथ इधर-उधर कहाँ भागे जा रहे हैं और क्यों भागे जा रहे हैं! इन्हें कौन-सा इतना आवश्यक काम है ? और ये सब, राक्षसों के समान इधर-उधर दौड़ती हुई बड़ी-बड़ी चीज़ें आ कहाँ से गईं ?

कभी आपने भी सोचा कि आपके सामने की मानवीय दुनिया की इस दौड़धूप, भगदड़, जल्दबाज़ी और चहल-पहल का अभिप्राय क्या है और उद्देश्य क्या है ? यदि आप देहात में रहते हैं तो भी आपने कभी रेलगाड़ी का सफर जरूर किया होगा और शायद किसी बड़े शहर को देखा भी होगा और यदि आप शहर में रहते हैं तो आप रोज ही देखते होंगे कि आपके मकानों के पास की सड़कों पर प्रतिदिन सैकड़ों नए-नए चेहरे दिखाई देते हैं, प्रतिदिन हजारों आदमी एक ओर से दूसरी ओर को निकल जाते हैं। कभी आपने भी सोचा कि इस सम्पूर्ण चहल-पहल और घने आवागमन का उद्देश्य क्या है ?

जीवन की पेचीदगी—आज के मनुष्य का जीवन बहुत पेचीदा हो गया है। हम में से अधिकांश लोग नहीं जानते कि वे जो चीज़ें व्यवहार में ला रहे हैं, वे किस तरह बनती हैं; वे जिन सवारियों पर सवार होते हैं, उन के सम्बन्ध में भी उन्हें ज्ञात नहीं कि उनका परिचालन विज्ञान और यन्त्रविद्या के किन सिद्धान्तों पर हो रहा है।

पुराना जीवन—पहले ज़माने में संसार के दैनिक व्यवहार और लेन-देन स्पष्ट थे। बढ़ई, तरखान, राज, धुनियां, जुलाहा आदि व्यवसायजीवी छोटे-छोटे औज़ारों और यन्त्रों को हाथ से चला कर उस ज़माने के लोगों की आवश्यकताओं को पूरा किया करते थे। जिस बैलगाड़ी, बहेली, रथ या बग्घी पर वे लोग सवार होते थे, वह उनकी आँखों के सामने बनी होती थी। जो कपड़े वे पहनते थे, उनका सूत प्रायः उनकी माँ-बहनों का काता हुआ होता था और बुनावट गाँव के जुलाहे द्वारा की गई होती थी। जो स्वादिष्ट पदार्थ और मिठाइयाँ वे खाते थे, वह सब उनके घर में अथवा बाजार के हलवाइयों द्वारा तैयार किया हुआ होता था। उस समय का लेन देन भी गुथीला नहीं था। एक जगह का बढ़िया माल धीरे-धीरे, बैलों, घोड़ों, ऊँटों और मनुष्यों की सवारी करता हुआ काफ़ी दूर तक जा पहुंचता था। पालवाले जहाज उसे नदी और समुद्र के पार भी पहुंचा देते थे। तब मनुष्य के जीवन मे पेचीदगी बहुत कम थी। अमीर-गरीब दोनों तरह के लोग थे, मगर व्यवहार में उनके जीवन में कोई बहुत असाधारण भेद नहीं था।

नई परिस्थितियां—परन्तु आज वह बात नहीं रही। यद्यपि, आवागमन के साधन अब बहुत श्रेष्ठ बन गए हैं और एक सप्ताह ही में हिन्दोस्तान से अमेरिका पहुँचा जा सकता है; यद्यपि रेडियो के द्वारा आज संसार-भर के समाचार उसी समय जान लिये जाते हैं, तथापि मनुष्य

का जीवन आज इतना पेचीदा हो गया है कि आवागमन और बातचीत की इतनी सुविधा रहते हुए भी एक मनुष्य राजनीति, विज्ञान, व्यवसाय और लेन-देन की बहुत कम बातें जान या समझ सकता है।

मनुष्य मशीन बन गया है—नतीजा यह हुआ है कि मनुष्य स्वयं भी किसी मशीन का एक पुर्ज़ा-सा बन गया है। एक ऐसा पुर्ज़ा, जिसकी स्वतन्त्र सत्ता का सम्पूर्ण मूल्य इसी आधार पर आँका जाता है कि मशीन के लिये उसकी कितनी महत्ता है। जिस तरह मशीन का एक पुर्ज़ा, अपना एक विशेष कार्य ही कर सकता है और मशीन के बाकी पुर्ज़ों के कार्य से उसे बहुत कम मतलब होता है, उसी तरह आजकल का मनुष्य भी अपना एक विशिष्ट कार्य ही करता है और समाज के बाकी व्यवहार को समझने या जानने की उसे न तो विशेष आवश्यकता होती है और न उनसे उसका विशेष सम्बन्ध ही होता है। उदाहरण के लिये अनारकली के बाज़ार में संसार के सभी देशों का बना हुआ, हज़ारों किस्मों का माल बिकता है, मगर वह सम्पूर्ण माल जिस तरह लाहौर में पहुँच पाता है, विदेशों के पेचीदे विनिमय, होड़, प्रतिस्पर्धा, माल तैयार करने और मार्केट बनाने के गुर आदि के सम्बन्ध में अनारकली के दूकान-दारों को बहुत कम बातें मालूम होंगी। कल और कारखानों में काम करनेवाले मनुष्यों के सम्बन्ध में तो यह बात और भी अधिक सत्यता के साथ कही जा सकती है। बड़ी-बड़ी मिलों में जो मज़दूर काम करते हैं, वे मानो स्वयं भी उन

मिलों का एक जीवित पुर्जा बन गए हैं, ऐसा पुर्ज़ा जो छुट्टी मिलते ही स्वतन्त्र मनुष्य बन जाता है। ✗

देशों की परस्पराश्रितता—आज के संसार का एक देश दूसरे देशों की सहायता पर आश्रित रहता है। कुछ देश व्यवसायप्रधान हैं, कुछ देश कृषिप्रधान हैं, कुछ देशों में व्यवसाय और कृषि दोनों की अत्यधिक महत्ता है और किसी-किसी देश में कृषि और व्यवसाय कुछ भी नहीं होता, केवल कोई एक या कुछ चीज़ें ऐसी पैदा होती हैं, जिन्हें अन्य देशों को देकर उस देश के निवासी अपनी आवश्यकताएँ पूरी कर लेते हैं।

अन्योन्याश्रिता के उदाहरण—मानव-समाज की यह अन्योन्याश्रिता बहुत व्यापक है। अमेरिका में काफ़ी वर्षा नहीं हुई, इस का परिणाम यह हुआ कि गामे और मॉझे के जाटों में व्याह-शादियाँ बड़ी धूमधाम से होने लगी। अमेरिका में गेहूँ की फसल अच्छी नहीं हुई थी, इससे संसार-भर में गेहूँ की कीमत बढ़ गई और पंजाब के किसान अपेक्षाकृत अधिक सम्पन्न बन गए, और भारतवर्ष के किसानों की सम्पन्नता ब्याह शादी के अवसर दिखाई न देगी तो और कब दिखाई देगी। इटली और एबीसीनिया में लड़ाई हुई, जापान का व्यवसाय और भी अधिक चमक उठा। इंग्लैण्ड ने मुद्रा-नीति में परिवर्तन किया और पंजाब के अनेक बैंक फेल हो गए।

संसार की आबादी—संसार में कुल मिलाकर करीब १ अरब ८६ करोड़ मनुष्य बसते हैं। प्रतिदिन लगभग एक लाख ३० हज़ार मनुष्यों की मृत्यु हो जाती है, परन्तु नए पैदा होनेवालों की संख्या इससे भी अधिक है। उन्नीसवीं

सदी के अर्थशास्त्रियों को यह भय प्रतीत होने लगा था कि कहीं कभी संसार में मनुष्यों की आबादी इतनी अधिक न बढ़ जाय कि उनके लिए इस पृथवी पर में निर्वाह कर सकना ही कठिन बन जाय। परन्तु बीसवीं सदी में दो कारणों से यह भय निर्मूल हो गया है। एक तो यह कि वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण अब यह सम्भव माना जाने लगा है कि मौका पड़ने पर कभी विभिन्न गैसों से भी खाद्य पदार्थों की आवश्यकता पूरी की जा सकेगी; इधर कृषि के साधनों में इतनी उन्नति हो गई है कि उपज पहले की अपेक्षा बहुत बढ़ गई है। दूसरा यह कि संसार की पढ़ी लिखी जमातों में, विशेषतः पश्चिम के देशों में सन्तानोत्पत्ति की संख्या पहले की अपेक्षा बहुत कम हो गई है। सन्तान कम होने से आबादी के बहुत अधिक बढ़ जाने का भय नहीं रहा।

इन १ अरब ८६ करोड़ मनुष्यों में निम्न-लिखित जातियों के लोग हैं—

मंगोल	६८ करोड़
आर्य	७३ ,,
हबशी	२१ ,,
सैमेटिक	१० ,,
मलया	१० ,,
रेड इण्डियन आदि	३ ,,
अन्य	१ ,,
कुल	१८६ करोड़

ये संख्याएँ सन् १६३१ की है, अनुमान है कि आज तक संसार की आबादी इसकी अपेक्षा बढ़ गई होगी।

जीवन-संघर्ष—मनुष्य ने इस पृथवी के अन्य देह-धारियों को तो बहुत समय से अपने अधीन कर रक्खा है, परन्तु आपस में, मनुष्यों ही की विभिन्न श्रेणियों तथा जातियों में, वह किसी तरह की, पूर्णरूप से शान्तिमयी व्यवस्था नही कर पाया। मानव-जाति के इतिहास के प्रारम्भ से लेकर अब तक मनुष्यों की विभिन्न जमातें एक दूसरे से भयंकर रूप में लड़ती चली आ रही हैं। इस पारस्परिक प्रतिस्पर्धा ने जीवन के संघर्ष को और भी अधिक पेचीदा और कठोर बना दिया है। परिणाम यह हुआ है कि मनुष्य की आकांक्षाओं और प्रयत्नों की कोई सीमा नहीं रही।

बिजली आदि पर विजय—जीवन-संघर्ष से अपने प्रयत्नों के कष्ट को हलका करने के लिए मनुष्य ने अपने दिमाग़ को टटोला और इसका नतीजा निकला वैज्ञानिक आविष्कार। पहले-पहल मनुष्य ने यन्त्र बनाए; फिर पानी, वायु आदि भौतिक पदार्थों की शक्ति से लाभ उठाना सीखा और उसके बाद क्रमशः भाप, बिजली और इलैक्ट्रोन्स की शक्तियों को वश में करने का आविष्कार किया। इन आविष्कारों की बदौलत मनुष्य की कार्यशक्ति बहुत अधिक बढ़ गई है। आज १० हजार घोड़ों की शक्ति से काम करनेवाली बड़ी बड़ी मशीनों पर नियन्त्रण रखने के लिए थोड़े से ही मनुष्यों की आवश्यकता होती है।

जीवन का संघर्ष बढ़ गया है—परन्तु प्रकृति की इन महाशक्तियो पर विजय पाकर भी मनुष्य अपने जीवन-संघर्ष की उग्रता को ज़रा भी कम नहीं कर सका। बल्कि वह उग्रता तो अब और भी अधिक बढ़ गई है और जीवन संघर्ष की इसी उग्रता का परिणाम है, मनुष्यों की यह निरन्तर दौड़धूप और यह घबराहट-भरी शीघ्रता।

स्वामित्व के आधार—जीवन-संघर्ष की इस बात को ज़रा और अधिक खोल कर कहने की आवश्यकता है। बात यह है कि मनुष्य की व्यक्तिगत आवश्यकताएँ तो अवश्य सीमित हैं, परन्तु उसकी इच्छाओं और आकांक्षाओं की कोई सीमा नही है। वह लगातार संग्रह करते चला जाना चाहता है। बहुत प्राचीन काल से मनुष्य समाज ने इस सिद्धांत को स्वीकार कर लिया था कि—

१. जिस चीज़ अथवा चल और अचल सम्पत्ति पर किसी व्यक्ति का अधिकार स्थापित हो जाय, वह उसी व्यक्ति की मान ली जाय।

२ कानून के अन्दर रह कर एक व्यक्ति जो कुछ प्राप्त, संचित अथवा उपार्जित कर सके, उस पर उसी का अधिकार रहे।

३. पिता की जायदाद स्वतः पुत्रों के अधिकार में आ जाया करे।

जायदाद के लिये संघर्ष—इन बातों से व्यक्तिगत जायदाद की नींव पड़ी और शक्तिशाली, चतुर तथा महत्वाकांक्षी व्यक्तियों का ध्यान प्रायः अपनी व्यक्तिगत जायदाद बढ़ाने और कायम रखने की ओर ही लगा रहा। मशीन

की सहायता पाकर यह व्यक्तिगत जायदाद की संस्था और भी अधिक बलवती हो गई। समर्थ राजाओं और शक्तिशाली जातियों ने बड़े-बड़े साम्राज्य इसी उद्देश्य से स्थापित किये और क्रमशः मनुष्य के सम्मुख यह महत्वाकांक्षा और भी उग्ररूप में आ खड़ी हुई कि वह अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति को बढ़ाए। जीवन-संघर्ष की तीव्रता और भी अधिक बढ़ते जाने का यही कारण है।

देशभक्ति—किसी समय मनुष्य-समाज मुख्यतया धर्मों के आधार पर विभक्त था। आज धर्मों की महत्ता बहुत कम हो गई है और देश-भक्ति तथा जातीयता ने उसका स्थान ले लिया है। देश-भक्ति आज के संसार का परम धर्म बना हुआ है। यह देश-भक्ति आज केवल अपने देश की उन्नति करने की इच्छा तक ही सीमित नहीं। देश-भक्ति का अब यह अभिप्राय भी लिया जाता है कि अन्य देशों की अपेक्षा अपने देश को अधिक उन्नत और अधिक सम्पन्न बनाने की कोशिश की जाय। इस उद्देश्य से दूसरे देशों को अपने अधीन बनाने का प्रयत्न करना भी देश-भक्तों की निगाह में पुण्य देनेवाला माना जाता है।

जाति-भक्ति—जीवन-संघर्ष का दूसरा रूप जातीय संघर्ष के रूप में प्रकट हुआ है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह मिल कर रहता है और स्वभावतः वह इस बात का प्रयत्न करता है कि अपनी उन्नति के लिए वह उस श्रेणी अथवा उस जाति की उन्नति करे, जिसमें वह रहता है, जिसमें

उसने जन्म लिया है। भारतवर्ष में अभी तक धर्म-भक्ति अथवा सम्प्रदाय-भक्ति की प्रधानता है।

साम्राज्यवाद—राजनीतिक दृष्टि से, साम्राज्य स्थापित करने की अभिलाषा आजकल के संसार की सब से बड़ी जातीय महत्वाकांक्षा है। एशिया तथा अफ्रीका की अनेक जातियों पर पश्चिम की जातियों ने अपना प्रभुत्व स्थापित किया हुआ है। इनमें अँगरेज़ों का साम्राज्य सबसे बड़ा है। अँगरेज़ी साम्राज्य इतना बड़ा है कि उसमें कभी सूर्य अस्त नहीं होता।

संसार की वर्तमान लहरें—संसार में आजकल चार प्रमुख राजनीतिक लहरें चल रही हैं—

१. साम्राज्यलिप्सा तथा डिक्टेटरशिप—संसार के अनेक देश अपनी उन्नति के लिए आज बड़े-बड़े साम्राज्य स्थापित करने की महत्वाकांक्षा कर रहे हैं। इन देशों में प्रजा-तन्त्र शासन के आधारभूत सिद्धान्तों के विरुद्ध डिक्टेटरशिप चल पड़ी है अर्थात् एक ही व्यक्ति को शासन और व्यवस्था के पूरे अधिकार दे दिए गए हैं। संसार के अनेक देशों में आजकल डिक्टेटरशिप स्थापित है और ये देश अपने देश का राजनीतिक प्रभुत्व बढ़ाने के लिए सैनिक तैयारियों में लगे हुए हैं। इन देशों में प्रत्येक नौजवान को आवश्यरूप से सैनिक शिक्षा लेनी पड़ती है, ताकि मौका पड़ने पर उसे युद्ध में भेजा जा सके। अस्त्र-शस्त्र बढ़ाए जा रहे हैं। नई-नई विषैली गैसों का आविष्कार किया जा रहा है, बम और गोलों का संग्रह किया जा रहा है। युद्ध के सामुद्रिक और हवाई जहाज़

बहुत बड़ी संख्या में बनाए जा रहे हैं। देश की वार्षिक आय का बहुत बड़ा भाग इन्हीं बातों में खर्च किया जा रहा है। इस तरह के देशों में इटली और जर्मनी प्रमुख हैं। पिछले बरसों में इन दोनों देशों ने अपना साम्राज्य बढ़ा भी लिया है। इनकी देखादेखी जापान भी अपना साम्राज्य बढ़ा रहा है।

इन देशों की देखादेखी अन्य देश भी, जहाँ डिक्टेटर-शिप नहीं है, सावधान हो गए हैं और वे भी अपनी युद्ध सामग्री तथा सेना-बल बढ़ाने में संलग्न हैं। पिछले वर्षों में संसार-भर के अधिकांश देशों की राष्ट्रीय आय का, करीब आधा भाग युद्धों की तैयारी में ही लगता रहा है। विशेषज्ञों का कहना है कि बहुत शीघ्र, कुछ ही वर्षों में, एक ऐसा नाश-कारी महायुद्ध होने की सम्भावना है, जैसा युद्ध संसार के इतिहास में कभी नहीं हुआ। इस युद्ध में संसार-भर के अधिकांश देश अवश्य भाग लेंगे। सितम्बर १९३८ के अन्त में विश्वव्यापी महायुद्ध शुरू होते-होते रुक गया। परन्तु संसार के सभी देशों को विश्वास है कि महायुद्ध होना है और वे उसकी तैयारी में लगे हुए हैं।

२. अन्तर्जातीयता और भ्रातृभाव—दूसरी लहर अन्तर्जातीयता की है। संसार के बड़े-बड़े विचारकों की सलाह है कि मनुष्य-जाति में शान्ति की स्थापना करने के लिए यह आवश्यक है कि सब जातियों का एक अन्तर्जा-तीय राष्ट्रसंघ का स्थापित किया जाय। पिछले यूरोपीयन महायुद्ध में जो भारी जनक्षति हुई थी, उसे देख कर संसार

के प्रमुख देशों ने एक अन्तर्जातीय राष्ट्रसंघ की स्थापना भी की थी। जैनेवा में इस राष्ट्रसंघ का केन्द्र कायम है। बहुत से प्रमुख राष्ट्र इस राष्ट्रसंघ के सदस्य हैं। परन्तु इस राष्ट्रसंघ की कोई अपनी सेना या कोई अपना राज्य नहीं है। अत; दण्ड देने की शक्ति के अभाव से, यह राष्ट्र-संघ बहुत निर्बल बना रहा। सन् १६३५ में इटली ने राष्ट्र-संघ की स्पष्ट आज्ञाओं के प्रतिकूल एबीसीनिया पर चढ़ाई कर दी और करीब ७ महीनों के युद्ध के बाद एबीसीनिया को विजय कर लिया। राष्ट्रसंघ एबीसीनिया को पराजय के मुख से बचा नहीं सका और इटली को कोई सज़ा नहीं दे सका। उसके बाद जापान, चीन के एक बड़े भाग को हड़प कर गया। इन घटनाओं से राष्ट्रसंघ की सामर्थ्य और भी कम हो गई। संसार में विश्वभ्रातृत्व स्थापित करने की राष्ट्रसंघ की भावना का अब संसार के शक्तिशाली राष्ट्रों में बहुत कम आदर है। राष्ट्रसंघ की स्थिति दिन-प्रति-दिन कमज़ोर होती जाती है।

३. साम्यवाद—संसार की तीसरी लहर का नाम साम्यवाद है। सन १६१६ तक साम्यवाद केवल एक कल्पना की चीज़ समझा जाता था। सम्पूर्ण मनुष्य समाज को आर्थिक दृष्टि से लगभग एक ही समता पर रखना इस का ध्येय था। परन्तु रूस की राज्यक्रान्ति के बाद लैनिन ने रूस में साम्यवादी सरकार की स्थापना कर दी और इसका नाम बोल्शेविक सरकार रख दिया। बोल्शेविक सरकार ने व्यक्तिगत सम्पत्ति ज़ब्त कर ली और उत्पत्ति के सभी

साधनों—कारखानों और मशीनों—को राष्ट्र की सम्पत्ति बना दिया। परन्तु कुछ ही समय के परीक्षण के बाद रूस का साम्यवाद उतना तीव्र नहीं रहा। वहाँ स्वतन्त्र व्यापार करने तथा व्यक्तिगत जायदाद बनाने की भी अनुमति दे दी गई। अनेक अनुभवों के बाद साम्यवाद के सिद्धांतों में पूर्ण आर्थिक समानता की बजाय, प्रत्येक मनुष्य को यथेष्ट शिक्षा और उन्नति के समान साधन देने की महत्ता बहुत अधिक बढ़ गई है। और अब यह कहा जा सकता है कि रूस की साम्यवादी सरकार तथा वहाँ की साम्यवादी जनता अर्थ-शास्त्र की दृष्टि से यूरोप के किसी अन्य देश की सरकार या जनता से पिछड़ी हुई नहीं है।

शुरू-शुरू में रूस की बोल्शेविक सरकार में वह जोश था, जिसे 'नए मुरीद' का जोश कहा जाता है। रूस की सरकार अपने प्रचार कार्य द्वारा संसार-भर के देशों की जनता में साम्यवादी सिद्धान्तों का प्रसार करना चाहती थी। इस कार्य के लिए रूस के राज्यकोष से काफी धन भी व्यय किया जाता था। परन्तु उस के बाद, व्यावहारिक अनुभवों के आधार पर, रूस ने वह कार्य बन्द कर दिया। इस समय रूस की साम्यवादी सरकार भी सेना, अस्त्र-शस्त्र आदि की दृष्टि से, यूरोप के अन्य शक्तिशाली राष्ट्रों से पिछड़ी हुई नहीं है। संसार के प्रमुखशक्ति शाली राष्ट्रों में उसकी गणना है। परन्तु रूस का साम्यवाद अब बहुत शिथिल ढंग का हो गया है।

साम्यवाद का यह परीक्षण व्यापक तौर से केवल रूस

में ही व्यवहार में लाया गया है, परन्तु इसका एक प्रभाव यह भी हुआ है कि संसार के सभी देशों में मज़दूरों की शक्ति तथा प्रभाव बढ़ गए हैं। अनेक देशों में साम्यवादी दल तथा मज़दूर दलों की विजय होती रही है। स्वयं इँग्लैंड में भी अनेक बार मज़दूर दल की सरकार की स्थापना हो चुकी है। गत महायुद्ध के विरुद्ध मानव-जाति में जो प्रतिक्रिया हुई थी, उससे साम्यवाद के सिद्धान्तों का प्रचार होने में मदद मिली थी। परन्तु अब वह बात जाती रही है और संसार के अधिकांश देशों में जातीयता के उग्रभाव तथा साम्राज्यवाद की प्रवृत्ति ही अधिक बलवती बनी हुई है।

४. स्वाधीनता के लिए प्रयत्न—संसार के पराधीन देशों में जागृति और स्वराज्य स्थापना की जो लहर चल रही है, वह वर्तमान संसार की चौथी प्रवृत्ति है। अनेक पराधीन देश प्रयत्न करके गत वर्षों में स्वाधीन बन गए हैं और अन्य पराधीन देशों में स्वाधीनता के लिए प्रयत्न जारी है।

इस तरह ये चार विभिन्न तरह की लहरें आज के मानव संसार को गतिशील और कर्मण्य बना रही हैं।

राष्ट्रसंघ (लीग आफ़ नेशन्स)—उपर्युक्त प्रवृत्तियों में से, संसार में शान्ति तथा भ्रातृभाव बढ़ाने के लिए जैनेवा में जिस राष्ट्रसंघ की स्थापना हुई है, उसके सम्बन्ध में कुछ विस्तार के साथ लिखने की आवश्यकता है। सन् १९२० में वार्सेलीज़ की संधि के अनुसार राष्ट्रसंघ की स्थापना हुई थी। राष्ट्रसंघ का सदस्य बनते हुए प्रत्येक देश को इस बात की प्रतिज्ञा करनी पड़ती है कि वह संघ के

किसी अन्य सदस्य के साथ झगड़ा हो जाने की दशा में वह कम-से कम ९ महीनों तक शस्त्र और सेना का प्रयोग नहीं करेगा, इस अरसे में वह राष्ट्रसंघ द्वारा उस झगड़े को निबटाने का प्रयत्न करेगा। लीग एसेम्बेली का वार्षिक अधिवेशन प्रति वर्ष सितम्बर मास के प्रथम सोमवार से शुरू होता है। लीग की कार्य-समिति के पाँच देश स्थायी सदस्य हैं और शेष देशों के ९ प्रतिनिधि चुने जाते हैं। इस कौन्सिल के चार अधिवेशन प्रतिवर्ष होते हैं। निम्नलिखित देश इस लीग के सदस्य हैं—

एबीसीनिया, अल्बानिया, अरजन्टाइन, आस्ट्रेलिया, वेल्जियम, बोलिविया, बल्गेरिया, कैनाडा, चाइल, चीन, कोलम्बिया, क्यूबा, ज़ेकोस्लावेकिया, डैनमार्क डौमीनियन रिपब्लिक, इस्थानिया, फिनलैण्ड, फ्रांस, इंगलैण्ड, ग्रीस, गौटेमाला, हौण्डूरस, हंगरी, भारतवर्ष, आयरलैण्ड, इटली, ईराक, लिटविया, लिबेरिया, लिथूनिया, लक्समबर्ग, मैक्सिको, हौलैण्ड, न्यूज़ीलैण्ड, निकारागुआ, नार्वे, पैनामा, पारागुआ, फारस, पेरू, पोलैण्ड, पुर्तगाल, रूमानिया, सल्वादर, स्याम, दक्षिण अफ्रीका, स्पेन, स्वीडन, स्विटज़रलैण्ड, टर्की, उरुगुआ, वैनेजुला, यूगोस्लाविया, रूस और अफगानिस्तान।

सम्पत्ति की उत्पत्ति तथा विभाग में विषमता—एक तथ्य की विचित्रता और अस्वाभाविकता से इन्कार नहीं किया जा सकता। वैज्ञानिक आविष्कारों की बदौलत उत्पत्ति के साधन पहले की अपेक्षा बहुत श्रेष्ठ बन गए है और उन की

सहायता से उत्पत्ति की मात्रा वहुत अधिक बढ़ गई ह और उसका दर्जा भो बढ़ गया है। किसी ज़माने में एक जुलाहा दिन-भर मेहनत करके ५ गज़ कपड़ा वुना करता था और वह भी तब, जब एक लड़का और उसकी घरवाली उसकी मदद पर रहती थीं, आज कपड़े की नए ढंग की मिलों में एक मज़दूर के हाथ से सैकड़ों गज़ कपडा तैयार हो जाता है और एक मनुष्य अकेला ही अनेक मशीनों का संचालन कर सकता है। यही दशा अन्य व्यवसायों मे भी है। परन्तु सम्पत्ति की उत्पत्ति के इतना अधिक वढ़ जाने तथा परिष्कृत हो जाने पर भी सम्पत्ति के विभाग के सिद्धान्तों में बहुन परिवर्तन आ गया है। सम्पत्ति का विभाजन करने के सम्बन्ध में जो सिद्धान्त पुराने ज़माने से चले आरहे थे, वे आज भो उसी तरह क़ायम है।

मनुष्य पर धन का राज्य—एक वात और भी। आजकल के जमाने में रुपये की महत्ता वहुत अधिक वढ़ गई है। धन की महत्ता पहले भो थी, परन्तु आज के समान नही। धन के जोर पर आज प्रत्येक चीज़ को खरीदा जा सकता है, और इससे भी वढ़कर परिस्थिति यहां तक आ पहुँची है कि सोना, चांदी आदि वहुमूल्य धातुओं की कीमत पर नियन्त्रण रख सकना आज मनुष्य-समाज की सामूहिक शक्ति के लिए भी वहुन कठिन हो गया है। इन धातुओं की कीमत में जो उतार-चढ़ाव आते रहते है, उस से हजारों-लाखों मनुष्यों की किस्मत वन और विगड़ जाती

है। मनुष्य को यह बात अच्छी तरह समझ लेने की ज़रूरत है कि धन और रुपया-पैसा उसके आराम के लिए है।

समाज के पुनर्निर्माण की आवश्यकता—हमें यह भी सोचना चाहिए कि संसार में सम्पत्ति का मूल्य निश्चित करने के लिए जो सिद्धान्त काम कर रहे है, उन पर मनुष्य का नियन्त्रण कहां तक है और वे कहां तक न्याय-संगत हैं। व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के अधिकारों में भेद कर सकना हमें आना चाहिये। अपने अधिकारों की रक्षा के लिये हमें सावधान और दृढ़-निश्चय रहना चाहिए और समाज, राष्ट्र तथा अन्य देशों के अधिकारों की हमें प्रतिष्ठा करनी चाहिए। ये सभी अधिकार बुद्धि, युक्ति और न्याय पर आश्रित रहें, और दूसरों के अधिकार का अपहरण करने का प्रयत्न न किया जाय, तभी संसार में शान्ति की स्थापना हो सकेगी। उसी दशा में जीवन संघर्ष में से तीव्रता कम हो सकेगी। इसी दृष्टि से हमें अर्थशास्त्र और राजनीति के सिद्धान्तों का अध्ययन करने की आवश्यकता है।

---

(२)

नागरिकता

एक पुरानी गाथा के अनुसार सृष्टि के प्रारम्भ में इस पृथ्वी पर केवल बालक और बालिकाओं का ही निवास था। उन्हें किसी तरह की चिन्ता या मेहनत नहीं करनी पड़ती थी। सब तरफ़ सुगन्धित फलों से लदे हुए वृक्ष थे। जगह-जगह स्वच्छ और शीतल जल के झरने बहा करते थे। मौसम सदा बहुत सुहावना रहता था। तब न बीमारी थी, न बुढ़ापा था और न मृत्यु ही थी। उन बालकों की शारीरिक दशा सदा एक-सी रहती थी और खेलने-कूदने के सिवाय उन्हें कोई काम न था।

एक दिन एक विचित्र-सा आदमी इन बच्चों के पास एक सुनहरी सन्दूक लेकर आया और कहने लगा कि मेरा यह सन्दूक रखलो। परन्तु शर्त यह है कि इसे कभी कोई खोले नहीं। बच्चों ने इस बात को मन्जूर कर लिया और वह आदमी सन्दूक़ रख कर चला गया।

वसन्त के एक सुहावने दिन, जब सब लडके खेलने-कूदने के लिये बाहर गए हुए थे, पिण्डोरा नाम की एक लड़की घर में अकेली रह गई। उसके जी में आया कि वह सन्दूक खोल कर देखे तो, कि उसमें क्या है। पिडोरा की अन्तरात्मा ने उसे फटकार भी बताई, परन्तु अन्त में उससे रहा नही गया और बड़ी मेहनत कर के उसने वह सन्दूक खोल ही डाला। सन्दूक खुलते ही उस में से बीसियों भयकर पनगे उड़ उड़ कर आसमान में मॅडराने लगे। इनमें से कोई बीमारी थी, कोई चिन्ता, कोई बुढ़ापा और कोई मृत्यु। परिणाम यह हुआ कि तब से दुनिया में बुढ़ापा, बीमारी, मृत्यु आदि शुरू हो गई।

इस पुरानी कहानी में जिस तरह पिण्डोरा के अपराध का फल उसके सभी साथी-संगियों को भोगना पड़ा था, उसी उसी तरह संसार-भर के प्रत्येक मनुष्य के कार्य का परिणाम, चाहे वह अच्छा कार्य हो या बुरा, सिर्फ़ उस अकेले व्यक्ति को ही नहीं भोगना पड़ता, बल्कि उसका प्रभाव उसके परिवार, उसके पड़ोसियों और उसके समाज पर भी पड़ता है।

मनुष्य की सामाजिकता—मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह अकेला नही रह सकता। वह एक दूसरे की मदद पर ज़िन्दा रहता है और एक दूसरे की मदद से वह अपना गुज़ारा करता है। मनुष्य-समाज में सभी लोग भिन्न-भिन्न तरह के कामों में लगे हुए हैं, एक भी मनुष्य ऐसा नहीं, जो अपनी सम्पूर्ण आवश्यकताओं को किसी और व्यक्ति की

सहायता लिए विना स्वयं पूरा कर लेता हो । यही कारण है कि एक व्यक्ति के कार्य का अच्छा या बुरा परिणाम केवल उसी व्यक्ति पर प्रभाव नहीं डालता, वह सम्पूर्ण नगर, समाज और जाति पर प्रभाव डालता है । मनुष्य को इस परस्पराश्रितता के आधार पर ही नागरिकता का जन्म हुआ है।

अच्छे और बुरे नागरिक—अगर हम अपने कार्यों से अपने कुटुम्ब, अपने पड़ोसियों, अपने नगरवासियों और अपने समाज को सुख पहुंचाते हैं तो हम अच्छे नागरिक हैं और इसके विपरीत यदि सफाई, व्यवस्था, शान्ति और कानून की अवज्ञा करके हम अपने पड़ोसियों, नागरिकों और समाज को क्लेश पहुंचाते हैं, तो हम बुरे नागरिक हैं। एक नागरिक का कर्तव्य है कि वह अपने पड़ोसियों के आराम तथा भलाई का उतना ही ध्यान रक्खे, जितना वह अपने लिये चाहता है । जिस नगर में अच्छे नागरिकों की संख्या जितनी अधिक होगी, वह नगर उतना ही स्वच्छ और सुखी होगा और जिस देश के ग्राम और नगर अधिक संख्या मे स्वच्छ और सुखी होंगे, वह देश उतना ही समृद्ध और उन्नत गिना जायगा।

नागरिक के अधिकार और कर्तव्य—नागरिकता के साथ जहाँ कुछ अधिकार प्राप्त होते हैं, वहाँ कुछ कर्तव्य भी रहते हैं । परन्तु मनुष्य स्वभाव की यह कमज़ोरी है कि वह कर्तव्य की अपेक्षा अधिकारों की अधिक चिन्ता करने लगता है । वास्तव में सच तो यह है कि जब तक एक

नागरिक अपने नगर या समाज के प्रति निज कर्तव्यों को पूरा न करे, तब तक उसके अधिकारों का सवाल ही नहीं उठता। अधिकार और कर्तव्य इन दोनों में कर्तव्य का स्थान पहला है।

समाज मनुष्य से बढ़ कर है—समाज में एक व्यक्ति के कार्यों का प्रभाव दूसरे व्यक्तियों पर पड़ना स्वाभाविक है, अतः यह समाज का अधिकार है कि वह अपने नागरिकों पर आवश्यक नियन्त्रण रक्खे। उदाहरण के लिए, यदि एक मनुष्य अपने घर को इतना गन्दा रखता है कि उससे नगर भर में बीमारी फैलने का खतरा है तो समाज का यह अधिकार है कि वह उस व्यक्ति को साफ रहने के लिए बाधित करे।

व्यक्ति की महत्ता—एक व्यक्ति के चाल-चलन का प्रभाव उसके मित्रों और पड़ोसियों पर भी पड़ता है। हम अपने को ऊँचे चरित्र का बना कर अपने मिलने-जुलने वालों के सामने एक आदर्श कायम कर सकते हैं। दूसरी ओर हमारे कार्यों का भौतिक प्रभाव हमारे पड़ोसियों पर पड़ता है। यदि एक आदमी सभी जगह थूकता रहता है, तो वह अपने आसपास बीमारी के कीटाणु पलने का मौका देता है। उसका परिणाम यह हो सकता है कि नगर में बीमारी फैले। इसी तरह यदि मैं सड़कों पर भी खेत बोने लगूं, अथवा अपने बीमार जानवरों को खुला छोड़ दूँ, या चुनाव के मौके पर अयोग्य व्यक्ति को अपना वोट दे दूं; तो इन सब का बुरा परिणाम न केवल मुझ अकेले को

ही झेलना पड़ेगा, अपितु सम्पूर्ण नगर को उससे कष्ट हो सकता है।

परिवार—कुछ व्यक्तियों से परिवार बनता है। जब कोई पुरुष और स्त्री आपस में विवाह करते हैं, तो उससे एक नए परिवार की उत्पत्ति होती है। परिवार में पिता मुख्य होता है। पत्नी, पुत्र, लड़की आदि इस के सदस्य होते हैं। सन्तान का कर्तव्य है कि वे अपने माता पिता की आज्ञा मानें और अपने को अधिक से अधिक योग्य बनाने का प्रयत्न करें। छोटे भाई का कर्तव्य है कि वह अपने बड़े भाई की इज़्ज़त करे और बड़े भाई का कर्तव्य है कि वह अपने छोटे भाई को सुशिक्षित बनाए। इसी तरह के कर्तव्य, आदर और स्नेह के भावों से परिवार का जीवन बँधा रहता है। एक परिवार में शान्ति रखने के लिये यह आवश्यक है कि उसके सम्पूर्ण सदस्यों का एक दूसरे के प्रति पूरा विश्वास हो और उसके हृदयों पारस्परिक में स्नेह विद्यमान हो।

सम्मिलित परिवार—भारतवर्ष में सम्मिलित परिवारों की प्रथा काफ़ी समय से चली आ रही है। विदेशों में प्रायः विवाह के बाद पति-पत्नी माँ बाप से अलग जाकर रहने लगते हैं, परन्तु प्राचीन हिन्दू ढंग के परिवारों में वे लोग एक साथ, अपने माँ-बाप के समीप ही रहते हैं। कल्पना कीजिए कि एक गृहस्थ के ४ पुत्र और ३ कन्याएँ हैं। कन्याएँ तो विवाह के बाद अपने नए घरों में चली जायँगी और पुत्रों के साथ विवाह के उपरान्त, उनकी पत्नियां भी आकर रहने लगेंगी। इस तरह घर में माँ-बाप के अतिरिक्त चार अन्य दम्पति भी

रहने लगेंगे। क्रमशः इन सब के सन्तानें होंगी और कुटुम्ब बढ़ता चला जायगा। प्राचीन हिन्दू-प्रथा के अनुसार इन चारों पुत्रों तथा मां-बाप की पूरी आय परिवार के मुखिया, (चारों पुत्रों के पिता) के पास जमा हो जायगी और वह प्रत्येक को उनकी आवश्यकता के अनुसार खर्च के लिए धन देता रहेगा। जायदाद पर सभी भाइयों का समान अधिकार होगा। आय के विभाग में पिता यह ख्याल नहीं करेगा कि अमुक पुत्र थोड़ा काम करता है, अतः उसे व्यय के लिए थोड़ा धन दिया जाय।

प्रायः देखा जाता है कि इस प्रथा से हिन्दू परिवारों का व्यापार-व्यवसाय तो, सहयोग के सिद्धान्तों को व्यवहार में लाने के कारण, अवश्य उन्नति कर सकता है, परन्तु इससे घर में शान्ति नहीं रहती। विभिन्न पुरुषों की रुचियों में भेद स्वाभाविक है फिर वे चाहे सगे भाई ही क्यों न हों। परन्तु सम्मिलित कुटुम्ब-प्रथा में परिस्थितियों के कारण अपनी रुचि के अनुकूल जीवन विताने की पूर्ण स्वाधीनता नहीं रहती, परिणाम यह होता है कि घर में लड़ाई-झगड़ा और अशान्ति होने लगती है।

बिरादरियां—भारतवर्ष में खून के सम्बन्ध को बड़ी महत्ता दी जाती है। एक वंश के मनुष्यों में, चाहे उनका सम्बन्ध कितना दूर का क्यों न हो, परस्पर कुछ-न-कुछ व्यवहार और लेन-देन बना ही रहता है। अनेक परिवारों से मिल कर एक बिरादरी बनती है। बिरादरी को एक तरह का 'भ्रातृभाव' या भाई-चारा भी कहा जा सकता है।

बिरादरी के ये सब लोग आपस के सुख और दुख में शरीक होते है। इन की प्रथाएं भी करीब-करीब एक जैसी होती हैं। एक बिरादरी में एक विवाह जिस ढंग से किया जायगा, बिरादरी के बाकी लोग अपने परिवारों में उसी ढंग पर विवाह किया करेंगे। व्यक्तियों के सामाजिक जीवन पर बिरादरी काफ़ी कड़ा नियन्त्रण रखती है। इस से लाभ और हानि दोनों ही होती हैं। लाभ तो यह कि समाज के जीवन का लैवल बहुत बिगड़ने नहीं पाता। व्यक्ति को बिरादरी का जो भय रहता है, वह उसे सीमा के अन्दर रहने के लिए लाचार करता है। इसके साथ ही सुख और दुख में बिरादरी का काफ़ी भरोसा रहता है। एक परिवार अपने को अकेला अनुभव नहीं करता। हानि यह है कि बिरादरी अपने सदस्यों पर इतना कठोर नियन्त्रण रखती है कि उसमें रहते हुए मनुष्य अपनी व्यक्तिगत उन्नति नहीं कर पाता। उस के मार्ग में बिरादरी बाधा बन कर खड़ी हो जाती है। बिरादरी की अपनी जो प्रथाएँ चली आ रही होती हैं, वे चाहे नुक्सान देने वाली भी क्यों न हों, उन्हें तोड़ सकना बहुत कठिन हो जाता है। मनुष्य-जीवन के प्रत्येक पहलू में बिरादरी की इतनी कड़ी और इतनी विस्तृत रीति-रस्में बनी हुई हैं कि उनके रहते हुए मनुष्य को सामाजिक जीवन में रत्ती-भर भी आज़ादी नहीं मिलती।

जाति (वर्ण) और समाज—अनेक बिरादरियों से एक जाति (Caste) बनती है और अनेक जातियों के

मेल से समाज बनता है। हिन्दुस्तान की वर्तमान जातियाँ जन्म के आधार पर चली आ रही हैं, कर्म के आधार पर नही। इस वंश-परम्परागत जाति-प्रथा के भी लगभग वही गुणदोष हैं,जो सम्मिलित कुटुम्ब और विरादरी संस्था के हैं।

विभिन्न जातियों के मेल से समाज बनता है, और इस देश मे समाज का मुख्य आधार धर्म रहा है। अब इस धारणा में परिवर्तन आ रहा है। अब तक समाज का काम प्राय धार्मिक प्रथाओं और धार्मिक रीति-रिवाजों की रक्षा करना ही समझा जाता था। समाज में जो विभिन्न जातियाँ और विरादरियां हैं, उनमें इस बात की प्रतिस्पर्धा रहती थी कि कौन जाति या कौन विरादरी प्राचीन प्रथाओं का अधिक से अधिक पालन करती है।

परन्तु अब इस धारणा में परिवर्तन आ रहा है। आर्य-समाज आदि सुधार-प्रेमी संस्थाएँ भी हिन्दू-समाज का अंग हैं और ये लोग प्राचीन धार्मिक परिपाटियों में उतना अगाध विश्वास नही रखते, इसका परिणाम यह हो रहा है कि समाज की प्राचीन प्रथाओं में भी परिवर्तन होता चला जा रहा है।

देश—एक देश में रहने वाले लोग परस्पर एक विशेष सम्बन्ध से, जिसे सभ्यता या संस्कृति का सम्बन्ध कहा जा सकता है, बँधे रहते हैं। इस सम्बन्ध का आधार उपयोगिता और इतिहास दोनों ही हैं। एक देश में रहने वाले लाखों-करोड़ों व्यक्ति सदियों से एक प्रकार के सुख-दुख सहते आ रहे होते हैं। सदियों से वे सब समान रूप

से एक ही सरकार द्वारा शासित रहे होते हैं । उनकी भाषा, उनका इतिहास, उनके रीतिरिवाज और उनके आदर्शों में समानता होती है और इन सब से बढ़ कर उनकी आवश्यकताएं भी करीब-करीब एक जैसी होती हैं । राष्ट्रीयता या देशभक्ति का भाव १६ वी और २० वीं सदी में संसार की सब से बड़ी शक्ति बन गया है और यह कहा जा सकता है कि आजकल संसार में राष्ट्रीयता का युग है ।

सम्पूर्ण देश को एक साथ लेकर उसके सम्बन्ध में नागरिकों के कर्तव्यों और अधिकारों के विषय में विस्तार के साथ कुछ भी कहने से पूर्व हमें राष्ट्र या देश की इकाइयों के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए और इस अध्याय में हम विस्तार के साथ इन्हीं इकाइयों पर प्रकाश डालेंगे । देश की ये इकाइयाँ गाँव, कस्बे, नगर और ज़िले हैं ।

गांव

गांवों की रचना—भारतवर्ष में बहुत पुराने ज़माने से राष्ट्र की इकाई गांव ही रही है । भारतवर्ष के ये गांव प्रायः अपनी सभी आवश्यकताओं को स्वयं पूरा कर लिया करते थे । गांव में थोड़े से कच्चे और पक्के मकान होते हैं । वह चारों ओर से खेतों से घिरा रहता है । गाँव में अधिक संख्या किसानों की होती है । उनके अतिरिक्त बढ़ई, तरखान, कुम्हार, धुनिया, जुलाहा आदि भी रहते हैं । प्रत्येक छोटे गाँव में इन पेशेवाले लोगों के निश्चित परिवार ही रहते हैं; नाई, लोहार, चमार, बनियाँ, ज्योतिषी, ब्राह्मण आदि सभी

प्राचीन काल से वंश परम्परागत रूप में चले आ रहे होते हैं। रुपये-पैसे का भी गांवों में चलन है, परन्तु वहां का अधिकांश लेन-देन अनाज द्वारा ही होता है। प्रत्येक किसान, फसल के बाद अनाज की एक निश्चित मात्रा प्रत्येक ढंग के कारीगर को देता है और उसके बदले में वह कारीगर साल-भर उसका काम करता है।

मालिक किसान और मजदूर किसान—गांव दो प्रकार के हैं। एक तो वे गांव, जिनमें ऐसे किसान रहते हैं, जो भूमि के मालिक हैं और दूसरे वे, जिनमें मज़दूर किसान रहते हैं अर्थात्—जिन गांवों की जमीन बड़े बड़े जमींदारों के अधिकार में है और किसान लोग ठेके पर उसे जोतते बोते हैं।

मजदूर—प्रत्येक ग्राम में कुछ ऐसे लोग भी होते हैं जिन के पास न तो पुश्तैनी जमीन ही होती है और न जिन्हें ठेके पर ही जमीन मिल सकती है। ये लोग प्रायः छोटी जातियों के होते हैं और इनमें से अधिकांश जातियों को अछूत माना जाता है। ये लोग खेतों में मजदूरी करते हैं। फसल के दिनों में और खेत बोने के दिनों में ये मजदूर काश्तकारों का हाथ बंटाते हैं, बदले में उन्हें भी उपज का एक बहुत छोटा-सा भाग दिया जाता है। इन लोगों की स्त्रियां चरखा कात कर सूत जमा करती हैं और ये लोग अब अन्य तरह की मेहनत मजदूरी करने लगे हैं।

मौरूसी ज़मींदार—जो किसान किसी ज़मीन को १२ बरसों तक लगातार जोतते और बोते रहें, उनका उस

ज़मीन पर पुश्तैनी हक हो जाता है। उन्हें ज़मींदार न तो उस ज़मीन से हटा सकता है और न उनका लगान ही बढ़ा सकता है। इस तरह ये लोग आधे ज़मींदार बन जाते हैं। भारतवर्ष में इस तरह के मौरूसी ज़मींदारों की संख्या कम नहीं है।

कारीगर लोग—हिन्दोस्तान के गाँवों में सब से अधिक महत्ता ज़मीदार किसानों की होती है। परन्तु अब धीरे-धीरे गांव का बनियां, जो लोगों को ज़रूरत पड़ने पर पैसा उधार दिया करता है, बहुत ज़ोर पकड़ गया है। फिर भी गाँवों में किसानों की बहुसंख्या होने से उनकी प्रतिष्ठा कारीगरों की अपेक्षा बहुत अधिक होती है। बढ़ई, चमार, लोहार आदि कारीगर किसानों के भरोसे ही गाँव में रहते हैं, इन्हीं से उन्हें आजीविका मिलती है और अनेक स्थानों पर तो उनके पास झोंपड़ी बनाने लायक भी अपनी ज़मीन नहीं होती। उन्हें गांव के छोटे-छोटे ज़मींदारों की कृपा पर ही आश्रित रहना पड़ता है।

नई परिस्थितियों में अनेक पेशों की तो बहुत ही दुरवस्था हो गई है। विदेशों से, विशेष कर जापान से, आजकल इतना भड़कीला और सस्ता कपड़ा गाँवों में पहुँचने लगा है कि वहाँ जुलाहों की प्रतिष्ठा बहुत कम बाकी बच रही है। यही हाल लोहार आदि का भी हुआ है। देश और विदेश के बड़े बड़े कल-कारखानों से भारत के गांवों में बहुत सस्ता और अपेक्षाकृत अच्छा माल पहुँच रहा है। परिणाम यह हुआ है कि गांवों के कारीगरों की दशा बिगड़ती जा रही है।

सामाजिक जीवन—शिक्षा के अभाव से भारतीय ग्राम प्राचीन रूढ़ियों के किले बने हुए हैं। वहां अभी तक पुरानी प्रथाओं पर अटूट श्रद्धा है। गांवों में पुरोहित, ज्योतिषी मुल्ला आदि रहते हैं और गांव के लोग उनकी बड़ी प्रतिष्ठा करते हैं। ज्योतिषी पत्रा आदि देखते हैं, जन्मपत्री तैयार करते हैं और लगन बताते हैं। ब्राह्मण सामाजिक कर्म तथा ब्याह-शादी आदि में पुरोहित का कार्य करते हैं। मुल्ला मुसलमानों के धर्मगुरु हैं। पञ्जाब के बहुत से गांवों में सिक्खों की धर्मशालाएँ भी हैं, वहाँ गुरु ग्रन्थ साहब का पाठ होता है। ये पंडित, मुल्ला, ग्रन्थी आदि जहाँ लोगों के सामाजिक त्यौहारों और उत्सवों का संचालन करते है, वहां गांव के बालकों को थोड़ा-बहुत पढ़ाते-लिखाते भी हैं।

पचायतें—ग्राम-संस्था का एक बहुत मुख्य अंग वहां की पंचायतें हैं। बड़े-बड़े गांवों में बिरादररियोंकी पञ्चायतें हुआ करती थी, और छोटे गांवों में सारे गांव की। पञ्चायत का निर्णय ग्रामीण किसानों के लिए परमात्मा का हुक्म था। उस के खिलाफ कोई मुखिया सरकारी अदालत में अपील नहीं करता था। पञ्चायत की गद्दी पर बैठ कर मामूली किसान भी अपने को परमात्मा के सत्यभाव का प्रतिनिधि समझने लगते थे। ग्राम की गवाहियाँ और दोनों पक्षों की बातें सुन-कर पंचलोग अपना निर्णय दे दिया करते थे। परन्तु धीरे धीरे ग्रामों में से पंचायतों की महत्ता कम होती गई और अब तो उनका स्थान तहसीलों की छोटी-छोटी अदालतों ने ले लिया है। भारत सरकार पिछले दस-बारह वर्षों से ग्रामों

की इस लुप्तप्राय प्राचीन पंचायत-संस्था का पुनरुद्धार कर रही है।

ग्रामों के कार्यकर्ता—प्रत्येक ग्राम में नम्बरदार, चौकीदार, पटवारी और ज़ैलदार ग्राम के सरकारी कार्यकर्ता होते हैं। इनमें नम्बरदार गांव का मुखिया होता है। उत्तर-भारत में नम्बरदार को चौधरी या मुखिया भी कहते हैं और दक्षिण में उन्हें पटेल, नायडू, रैड्डी आदि कहा जाता है। कलैक्टर अपने ज़िले के सभी गाँवों के नम्बरदार नियुक्त करता है। ये लोग आमतौर से ज़मींदारों में से ही चुने जाते हैं। प्रायः कोशिश की जाती है कि नम्बरदारों का ओहदा वंश-परम्परागत रहे। नम्बरदार का काम गाँव में शान्ति रखना और किसानों से भूमि-कर जमा करना है। उसकी सहायता के लिए चौकीदार रहता है। चौकीदार को पोलीस चौकी पर जाकर गाँव के विस्तृत समाचारों की सूचना देनी पड़ती है। प्रायः ५० से लेकर २०० घरों तक एक चौकीदार नियत किया जाता है। इस चौकीदार की सहायता से नम्बरदार गॉव में सरकार का प्रतिनिधित्व करता है। पटवारी का काम उपज और बोई ज़मीन की निगरानी और हिसाब रखना है, वह बोई गई ज़मीन के कर का हिसाब लगाता है। गाँव में पटवारी का बड़ा रोबदाब रहता है। अनेक गाँवों के ऊपर एक ज़ैलदार हुआ करता है। दक्षिण में उसे देशमुख कहते हैं। प्रायः ४० से लेकर ५० गाँवों के ऊपर एक ज़ैलदार होता है। इस ज़ैलदार का काम अपने अधीनस्थ ग्रामों के चौकीदारों, नम्बरदारों और पटवारियों पर

निगरानी रखना है । ज़ैलदार प्रायः ऐसा व्यक्ति नियत किया जाता है, जिसका प्रभाव सम्पूर्ण इलाके में हो । कलैक्टर चाहे तो ज़ैलदार का चुनाव भी करवा सकता है ।

ज़िला

पंजाब में लगान जमा करने के लिए प्रायः चार गाँवों पर एक पटवारी नियत किया जाता है । औसत ४० गाँवों पर एक ज़ैलदार रहता है और ६० या १०० गाँवों पर एक थाना बनाया जाता है । ३ या ४ थानों पर एक तहसील होती है और ३ या ४ तहसीलों पर एक ज़िला होता है। अँगरेज़ी राज्य में ज़िला एक बहुत महत्वपूर्ण इकाई है ।

डिप्टी कमिश्नर—ज़िले का मुखिया डिप्टी कमिश्नर होता है । सीमाप्रान्त, अवध, सी० पी० और पंजाब के अतिरिक्त अन्य प्रान्तों में उसे डिप्टी कमिश्नर न कह कर कलैक्टर कहते हैं । प्रान्त का गवर्नर ज़िले के डिप्टी कमिश्नर नियुक्त करता है । वे प्राय भारतीय सिविल सर्विस में से होते हैं। डिप्टी कमिश्नर ज़िले में से लगान जमा करने, शान्ति स्थापित करने और फौजदारी के मामलों में न्याय देने के लिए उत्तरदायी होता है। ज़िला मैजिस्ट्रेट भी वही होता है। ज़िले की म्युनिसिपैलिटी तथा ज़िला बोर्ड के कार्य का निरीक्षण भी उसी के ज़िम्मे होता है ।

पोलीस—प्रत्येक ज़िले में एक ज़िला पोलीस सुपरिण्टैण्डण्ट रहता है, जो पोलीस के विभाग का प्रधान होता है। उसकी सहायता के लिए डिप्टी सुपरिण्टैण्डैण्ट

भी नियुक्त किए जाते हैं। प्रधान की नियुक्ति प्रान्तीय सरकार द्वारा की जाती है। उसके नीचे इन्स्पैक्टर, सब-इन्स्पैक्टर और सिपाही हुआ करते हैं। पोलीस-विभाग का सबसे बड़ा हाकिम सूबे का इन्स्पैक्टर जनरल होता है। प्रायः प्रत्येक थाने में एक सबइन्स्पैक्टर रहता है, जिसे थानेदार कहा जाता है। उसकी अध्यक्षता में अनेक सिपाही रहते हैं।

पोलीस का काम ज़िले-भर में शान्ति कायम रखना, अपराधियों को पकड़ना और व्यवस्था कायम रखने में ज़िले के अधिकारियों को सहायता देना है। ज़िले में जो बड़े शहर होते हैं, उन पर विशेष पोलीस अफ़सर तैनात किए जाते हैं और वहां अनेक इन्स्पैक्टर तथा थानेदार रहते हैं।

लगान जमा करना—जैसा कि कहा जा चुका है, ज़िले-भर में से भूमि-कर जमा करने का उत्तरदायित्व डिप्टी कमिश्नर पर होता है। डिप्टी कमिश्नर को कलैक्टर कहा ही इसलिए जाता है कि वह ज़िले में से लगान जमा (Collect) करता है। इस कार्य में तहसीलदार, ज़ैलदार, कानूगो और पटवारी आदि उसकी सहायता करते हैं।

न्याय—ज़िले में न्याय का कार्य करने के लिए डिप्टी कमिश्नर को ज़िला मेजिस्ट्रेट कहा जाता है। वह फौज़दारी मामलों को सुनता है। दूसरे और तीसरे दर्ज़े के जो मैजिस्ट्रेट ज़िले में काम करते हैं, उनके निर्णयों की अपीलें ज़िला मैजिस्ट्रेट ही सुनता है। आवश्यकता पड़ने पर ज़िले

में अतिरिक्त ज़िला-मजिस्ट्रेट भी नियुक्त किए जाते हैं। दीवानी मामलों के लिए प्रत्येक ज़िले में ज़िला-जज नियत किया जाता है। उसे सैशन जज भी कहते हैं। दीवानी मामलों के लिए अनेक दर्ज़े के छोटे-बड़े जज ज़िले में नियत किये जाते हैं, उनके खिलाफ की गई अपीलें सैशन जज सुनता है।

डिप्टी कमिश्नर ज़िले में शान्ति और व्यवस्था क़ायम रखने की दृष्टि से पोलीस का मुखिया भी होता है और पोलीस ही फौज़दारी मामलों के केस दायर करने वाली होती है; उधर डिप्टी कमिश्नर ही ज़िला मजिस्ट्रेट भी होता है। इस दृष्टि से वह ज़िले के न्याय-विभाग का मुखिया होता है। न्याय और शासन-विभाग का एक व्यक्ति मुखिया हो, यह बात अनेक दृष्टियों से आक्षेप के योग्य समझी जाती है।

ज़िला-बोर्ड—लार्ड मेयो के समय भारतवर्ष में ज़िला-बोर्डों की स्थापना हुई थी। तब ज़िला-बोर्डों के सदस्य नामज़द किए जाते थे। उसके बाद क्रमशः ज़िला-बोर्डों में निर्वाचन की प्रथा होती गई और अब उनमें अधिकांश संख्या निर्वाचित सदस्यों की ही होती है। ज़िला-बोर्डों का काम सड़कें बनवाना, बाग लगवाना, स्कूल, अस्पताल, सराय आदि बनवाना और उनका संचालन करना है। इसके अतिरिक्त ज़िले की जायदाद की व्यवस्था करना तथा अन्य भी अनेक छोटे-मोटे काम ज़िला-बोर्डों की देखरेख में होते हैं।

सरकारी नियन्त्रण—ज़िला-बोर्ड अपना बजट खुद ही बनाते और खुद ही पास करते हैं। परन्तु उसकी स्वीकृति प्रान्तीय सरकार से ली जाती है। इस तरह सरकार ज़िला-बोर्डों के कार्य पर कठोर नियन्त्रण रख सकती है। पंजाब में ज़िला-बोर्डों के निर्वाचन में सम्मिलित निर्वाचन (Joint electorate) की प्रथा है।

नगर समितियां

म्युनिसिपैलिटियां—भारतवर्ष के नगरों का प्रबन्ध करने के लिए प्रत्येक नगर में म्युनिसिपैलिटियाँ बनी हुई हैं। ये म्युनिसिपैलिटियाँ वर्तमान राजनीति में बहुत ही महत्वपूर्ण संस्थाएँ हैं। इन्हें स्थानीय स्वराज्य की संस्थाएँ कहा जाता है। म्युनिसिपैलिटियों के सदस्य चुने जाते हैं। जब से इस देश में अंगरेज़ी राज्य की स्थापना हुई, तभी से यहाँ म्युनिसिपैलिटी और कारपोरेशनों की नींव डाली गई। भारत के इतिहास में सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य के ज़माने में भी नगर-संस्थाओं के होने के विश्वसनीय प्रमाण मिलते हैं।

कारपोरेशन—भारतवर्ष के चार बड़े नगरों, कलकत्ता, बम्बई, मद्रास और कराची में कारपोरेशन कायम हैं। अब अन्य भी अनेक नगरों में कारपोरेशन स्थापित होने वाले हैं। कारपोरेशनों का संचालन मेयर, एल्डरमैन एक्जैक्टिव अफ़सर मिल कर करते हैं। मेयर का निर्वाचन प्रतिवर्ष किया जाता है।

म्युनिसिपैलिटी और स्माल-टाउन कमेटी— अन्य नगरों में म्युनिसिपैलिटियाँ हैं, और उन्हें अपने प्रधान को चुनने का अधिकार प्राप्त है। पहले डिप्टी कमिश्नर ही म्युनिसिपैलिटियों के प्रधान हुआ करते थे। अब भी अनेक म्युनिसिपैलिटियों ने अपनी इच्छा से डिप्टी कमिश्नरों को अपना प्रधान बनाया हुआ है। बहुत छोटे-छोटे नगरों या क़सबों में स्माल-टाउन कमेटियां इसी उद्देश्य से क़ायम हैं।

नगर-समितियों के कार्य—शहर में सफ़ाई, छिड़काव, प्रकाश आदि का प्रबन्ध करना, सड़कें बनाना और स्कूल, हस्पताल आदि स्थापित करना, मकानों के नक्शे पास करना, नई आबादियों के निर्माण पर नियन्त्रण रखना, पानी का प्रबन्ध—ये सब म्युनिसिपैलिटियों के कार्य हैं। म्युनिसिपैलिटियों की अपेक्षा कारपोरेशनों के अधिकार अधिक हुआ करते हैं।

स्थानीय स्वराज्य-मन्त्री—प्रान्त-भर की पंचायतों, स्माल-टाउन कमेटियों, म्युनिसिपैलिटियों और ज़िला-बोर्डों के कार्यों की देखरेख करने के लिए एक स्थानीय स्वराज्य-मन्त्री नियुक्त किया जाता है। नई शासन प्रणाली के आधार पर स्थापित प्रान्तीय सरकारें पंचायतों और नगर-सभाओं की दशा को सुधारने का विशेष प्रयत्न कर रही हैं। इस समय भारतीय जनता म्युनिसिपैलिटियों के चुनावों तथा कार्यों में खूब दिलचस्पी ले रही है।

भारतीय शासन

देश का साधारण परिचय

आबादी की दृष्टि से भारतवर्ष संसार का दूसरा देश है। इसकी आबादी ३३ करोड़ ७५ लाख के लगभग है, अर्थात् संसार की आबादी का करीब पाँचवाँ भाग। इस देश का क्षेत्रफल १६ लाख वर्गमील है, अर्थात् इंगलैंड से बीस गुना और रूस के अतिरिक्त शेष सम्पूर्ण यूरोप के लगभग बराबर।

भारतवर्ष को सम्पूर्ण संसार का नमूना या एक छोटा संसार कहा जा सकता है। गरम से गरम और ठण्डे से ठण्डा जलवायु इस देश में उपलब्ध होता है। हिमालय की बरफ़ीली चोटियाँ और राजपूताना के गरम रेगिस्तान इसी एक देश में हैं। चिरापूँजी में प्रतिवर्ष ४०० इंच से ऊपर वर्षा होती है और मुल्तान में वर्ष-भर में १० इंच भी वर्षा नहीं होती। कहीं घने जंगल और हरे-भरे मदान हैं, तो कहीं ऊबड़-खाबड़ पथरीले टीले और रेतीले रेगिस्तान। इस देश की प्रकृति में जितना भेद है, उतना ही इस देश के मनुष्य-

जगत् में भी है। सीमाप्रान्त के एक श्वेत-वर्ण हट्टे-कट्टे विशालकाय पठान और मद्रास के पतले-सिकुड़े, कमज़ोर-से, कृष्णवर्ण तामिल सज्जन में परस्पर इतना अधिक भेद है, जितना यूरोप के किन्हीं दो विभिन्न देशों के निवासियों में न होगा। उनका पहनावा, बातचीत, रुचि, स्वभाव, भाषा, लिपि, रीति-रिवाज कोई भी आपस में नहीं मिलते।

प्रान्त और भाषाएँ—नए शासन-विधान के अनुसार हिन्दोस्तान में कुल मिलकर ११ प्रान्त हैं। इन प्रान्तों में परस्पर बड़ा भेद है। हिन्दोस्तान में जितनी भाषाएँ बोली जाती हैं, उनकी संख्या दो सौ से ऊपर है। इसी प्रकार लिपियों की संख्या भी बहुत अधिक है। परन्तु मुख्य-मुख्य भाषाएं निम्नलिखित हैं—

	बोलने वालों की संख्या
हिन्दी (पंजाबी-सहित)	१५ करोड़
बंगाली	५$\frac{१}{४}$,,
तैलगू	२$\frac{१}{२}$,,
मराठी	२ ,,
तामिल	२ ,,
कनाड़ी	१$\frac{१}{४}$,,
उड़िया	१$\frac{१}{४}$,,
गुजराती	१ ,,

इनमें से हिन्दी (हिन्दोस्तानी) देवनागरी और उर्दू इन दो लिपियों में लिखी जाती है। पंजाब की अपनी पृथक् लिपि नागरी से बहुत मिलती है। उत्तर-भारत में प्रायः हिन्दी का प्रचार है। बोलने वालों की दृष्टि से हिन्दी संसार की तीसरी भाषा है।

अनेक भेद—हिन्दोस्तान की जनता में परस्पर बहुत असाधारण भेद है। यहाँ लोगों का रहन-सहन, रीति-रिवाज़, पोशाक आदि कुछ भी आपस में नहीं मिलता। लोग धर्म को बड़ी महत्ता देते हैं और धर्मों के लिहाज़ से भारत की जनता इस प्रकार बांटी जा सकती है—

हिन्दू	२३,९१,९५,१४०	अनुयायी
मुसलमान	७,७६,३७,५४५	,,
ईसाई	६२,६६,७६३	,,
सिक्ख	४३,३५ ७७१	,,

पेशावर के एक पठान, मारवाड़ के एक राजपूत, नदिया (बंगाल) के एक भट्टाचार्य ब्राह्मण और त्रिचनापली के एक अब्राह्मण रेड्डी में परस्पर क्या समानता है, यह कहना कठिन है। इस दशा में यह पूछा जा सकता है कि इन लोगों को किस बात ने एक सूत्र में पिरो रक्खा है। वे एक ही देश के निवासी क्यों माने जाते हैं और उनके इन पारस्परिक भेदों को छोटा किस तरह समझा जा सकता है।

एकता के आधार—भारतवर्ष जितने क्षेत्रफल में फैला हुआ है, उतने क्षेत्रफल में, यूरोप में करीब दो दर्जन विभिन्न देश विद्यमान हैं। ऐसे देश, जिनकी सरकारों में परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं और अनेक में तो कौए और उल्लू की-सी दुश्मनी है। इधर, इस देश में, यह १६ लाख वर्ग मील का यह विशाल भूभाग एक ही सरकार के अधीन है और राजनीतिक दृष्टि से वह एक इकाई है। यह आज ही की बात नहीं, आज से कुछ समय पहले की बात नहीं, मध्ययुग की बात

नहीं, वल्कि आज से करीव २२०० वरस पहले, जव यूरोप के अनेक देशों के निवासियों को सभ्य कह सकना भी कठिन था, यह देश राजनीतिक दृष्टि से एक ही शासन के अधीन था। सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य और सम्राट् अशोक के शासनकाल में पाटलीपुत्र की सरकार भारतवर्ष के एक वहुत वड़े भाग तथा अफगानिस्तान पर एकछत्र राज्य किया करती थी। उसके वाद इतिहास के गुप्तकाल में, मुगल-काल में और मराठा-काल में यानी प्रत्येक काल में, वहुत वार भारतवर्ष एक ही शासन की अधीनता में रहा। इस तथ्य ने राजनीतिक दृष्टि से इस देश में, वहुत समयसे एकता का वीज वो रक्खा है।

केवल राजनीतिक दृष्टि से ही नहीं, संस्कृति, सभ्यता और साहित्य की दृष्टि से भी भारतवर्ष में वहुत प्राचीन काल से एकता की भावना चली आ रही है। वैदिक साहित्य के निर्माण में जहां पंजाव में आर्यों का भाग है, वहां दक्षिण निवासियों का भी कुछ कम हाथ नही। भिन्न-भिन्न युगों में, इस देश में सामाजिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक जागृति की जो लहरें चली, उनकी छाप इस महादेश के एक छोर से दूसरे छोर तक पड़ती रही। साहित्य, कला, संगीत इन सभी की दृष्टियों से भारतवर्ष में एकता की भावना सदियों से विद्यमान है और यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि इस देश के विभिन्न भागों के निवासियों में, जलवायु, शिक्षा का अभाव, जातियों की भिन्नता आदि के कारण उनकी पोशाक, रहन-सहन और वोल-चाल आदि में चाहे कितना वड़ा अन्तर क्यों न आ गया

हो, परन्तु वास्तव में वे एक राष्ट्र के निवासी हैं और उनमें परस्पर गहरी एकता के बीज विद्यमान हैं। पुराने ज़माने से कुम्भ आदि मेलों की मौजूदगी, जहाँ सम्पूर्ण भारतवर्ष के भागों से लोग जमा होते हैं, इस देश की आधारभूत एकता का प्रमाण है। सिर्फ हिन्दुओं में ही नहीं, इस देश के मुसलमान और सिक्खों में भी परलोक की महत्ता, भक्ति आदि भावों की प्रधानता है और यह सारे देश में एक ही संस्कृति होने का प्रमाण है।

भारत-सरकार

अगरेज़ी पार्लियामैण्ट—वर्तमान कानून के अनुसार हिन्दोस्तान की किस्मत का फैसला करने का अन्तिम अधिकार इंग्लैण्ड की पार्लियामैण्ट को है। वह भारतवर्ष में, चाहे जो नीति और जो शासन-विधान जारी कर सकती है। अंगरेज़ी पार्लियामैण्ट ने भारतवर्ष के शासन का काम चलाने के लिए अपने मन्त्रि मण्डल में एक भारत-सचिव (सैक्रेटरी आफ स्टेट फार इण्डिया) नियत किया हुआ है।

भारत-मन्त्री—यह मन्त्री भारत-सम्बन्धी सभी बातों के लिए पार्लियामैण्ट के सामने जिम्मेवार होता है। अन्य मन्त्रियों की तरह वह भी पार्लियामैण्ट की सब से बड़ी पार्टी के मुखियाओं में से, प्रधान-मन्त्री द्वारा नियुक्त किया जाता है। हिन्दोस्तान के वायसराय का यह कर्तव्य है कि वह उसके आदेशों का पालन करे। वायसराय का यह भी

कर्तव्य है कि वह इस देश की दशाओं से भारत-मन्त्री को सूचित करता रहे।

भारत-मन्त्री की कौन्सिल—भारत-मन्त्री की सहायता के लिए दो सहायक-मन्त्री होते हैं और एक हाई कमिश्नर नियुक्त किया जाता है। इनके अतिरिक्त एक भारत-कौन्सिल का भी निर्माण किया जाता है, जिस में ८ से लेकर १२ तक सदस्य होते हैं। इनमें से तीन सदस्य अवश्य ही भारतीय होते हैं। यह कौंसिल भारतवर्ष के सम्बन्ध के सभी मामलों में भारत-मन्त्री को सहायता देती है और भारत-मन्त्री नीति के मामलों में इस कौन्सिल से सलाह लेकर काम करता है। सन् १६३५ के शासन-विधान के अनुसार हाई कमिश्नर की नियुक्ति भारतवर्ष की ओर से होने लगी है।

सरकार का कार्य तीन भागों में विभक्त होता है—

१. शासन, २. व्यवस्थापन (कानून बनाना) और ३. न्याय। इन तीनों विभागों के सम्बन्ध में यहाँ पृथक्-पृथक् लिखा जायगा।

शासन

वायसराय और गवर्नर-जनरल—इस देश के शासन विभाग का मुखिया गवर्नर-जनरल कहलाता है और सम्राट के प्रतिनिधि की हैसियत से उसे वायसराय भी कहा जाता है। सम्राट की अनुमति से इंग्लैंड का प्रधान-मन्त्री उस की पांच वर्षों के लिए नियुक्ति करता है। वह प्रायः इंग्लण्ड के कुलीन घरानों का वंशज होता है। प्रयत्न किया जाता है

कि इंग्लैण्ड के बहुत श्रेष्ठ व्यक्तियों को भारतवर्ष का वायसराय बना कर भेजा जाय, क्योंकि यह पद बहुत ही सन्मान और उत्तरदायित्व का है।

वायसराय की कार्य-समिति—वायसराय को शासन के कार्यों में सहायता देने के लिए एक कार्य समिति नियुक्त की जाती है। वायसराय इस समिति का प्रधान होता है। भारतवर्ष का कमाण्डर-इन-चीफ़ (प्रधान सेनापति) इस समिति का अपने पद के अधिकार से सदस्य होता है। इनके अतिरिक्त ६ सदस्य अन्य होते हैं; जिनमें से ३ अवश्य भारतीय होते हैं। समिति का सारा कार्य सर्वसम्मति से ही करने का प्रयत्न किया जाता है, परन्तु बहुसम्मति से भी काम किया जा सकता है। समिति के सदस्य क्रमशः भारत-सरकार के शासन-विभाग के निम्नलिखित महकमों के मुखिया होते हैं—सेना और रक्षा, देश का गृह (आन्तरिक) प्रबन्ध, रेलवे और व्यापार, व्यवसाय और श्रम, आय व्यय; कानून और शिक्षा; स्वास्थ्य तथा भूमि। वायसराय को यह अधिकार भी प्राप्त है कि वह कार्य-समिति की राय न माने।

वायसराय और व्यवस्थापिका सभा—वायसराय भारतवर्ष की किसी व्यवस्थापिका सभा का सदस्य नहीं होता। परन्तु उनके अधिवेशनों में वह अपना भाषण दे सकता है। वायसराय की अनुमति से ही असेम्बली और कौन्सिल आफ स्टेट के अधिवेशन बुलाए जाते हैं और उसी की अनुमति से नया चुनाव होता है। कोई बिल वायसराय

की अनुमति के विना व्यवस्थापिका सभा में पेश नहीं हो सकता। आवश्यकता पड़ने पर वह किसी भी व्यवस्थापिका सभा के अधिवेशन को रोक सकता है। असेम्बली और कौन्सिल आफ स्टेट में जो बिल पास होते हैं, वे वायसराय की अनुमति पाकर ही कानून बन सकते हैं। यदि किसी बिल को असेम्बली या कौन्सिल आफ स्टेट फेल कर दे, तो वह भी वायसराय की अनुमति से कानून बन सकता है।

विशेष अधिकार—वायसराय को व्यवस्थापिका सभाओं में पेश किए विना आर्डीनान्स जारी करने का भी अधिकार हैं। ये आर्डीनान्स वाकायदा कानून समझे जायेंगे। प्रत्येक आर्डीनान्स ६ मास वाद स्वयं समाप्त हो जाता है। उसे जारी रखने के लिए आवश्यक होता है कि वायसराय उसकी पुनः घोषणा करे।

सम्राट का प्रतिनिधि—भारतवर्ष में वायसराय सम्राट का प्रतिनिधि है, अतः वह इस देश का सब से प्रमुख व्यक्ति माना जाता है और उसे देशी राज्यों से उपहार लेने का अधिकार भी प्राप्त है। उसके अधिकार और शक्तियाँ अपरिमित हैं। संसार के बहुत ही महत्वपूर्ण और शक्तिशाली पदों में से एक पद भारतवर्ष के वायसराय का भी है।

वायसराय की कार्य-समिति के सदस्य जिन विभागों के अध्यक्ष होते हैं, उनका ज़िक्र ऊपर किया जा चुका है। वायसराय उस समिति का प्रधान तथा सम्राट का प्रतिनिधि होने के अतिरिक्त विदेशी-सम्बन्ध तथा राजनीतिक विभाग का स्वयं मुखिया होता है।

नए परिवर्तन—सन् १९३५ में जो नया भारतीय शासन-विधान तैयार हुआ है, उसके अनुसार भारतवर्ष एक संघ (Federation) का रूप धारण कर लेगा और देशी रियासतें भी इस संघ की सदस्य बन जायंगी। इस अखिल-भारतीय संघ (All India Federation) के दो प्रमुख भाग होंगे। अंगरेजी भारत और देशी रियासतें। अभी तक निश्चय से नहीं कहा जा सकता कि भारतवर्ष में यह संघ शासन कब से जारी होगा।

फ़िडरेशन में द्वैध शासन—सन् १९२१ के भारतीय शासन के अनुसार सन १९३६ तक प्रान्तों में द्वैध शासन की प्रथा थी। अर्थात्, प्रान्त के हाकिम गवर्नर की सहायता के लिए जो मन्त्री होते थे, उनमें से कतिपय की सीधी नियुक्ति गवर्नर स्वयं करता था और कतिपय प्रान्त की व्यवस्थापिका सभा के चुने हुए सदस्यों में से लिए जाते थे। इन दोनों प्रकार के मन्त्रियों की अध्यक्षता में जो कार्य होते थे, उन्हें क्रमश: सुरक्षित (Reservd) तथा हस्तान्तरित (Transefered) कार्य कहा जाता था। इसका अभिप्राय यह था कि सुरक्षित विभागों के मन्त्री जनता के प्रतिनिधि नहीं होते थे और हस्तान्तरित विभागों के मन्त्री जनता के प्रतिनिधि होते थे। इन दोनों प्रकार के विभागों का सब से प्रमुख शासक प्रान्त का गवर्नर ही हुआ करता था। सन् १९३५ के नए भारतीय शासन-विधान के अनुसार प्रान्तों में सभी सुरक्षित कार्य अब हस्तान्तरित कार्य बना दिए गए हैं। इस तरह वहां अब द्वैध शासन नहीं रहा। वहां जो कुछ हो गया है, उसका वर्णन यथा-

स्थान किया जायगा, परन्तु यहां इतना अवश्य कहा जासक्ता है कि प्रान्तों के शासन में अब आंशिक स्वराज्य प्राप्त हो गया है।

प्रान्तों का वह पुराना द्वैध शासन अब केन्द्रीय सरकार में ले आया गया है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, वायसराय अपनी कार्य समिति के सदस्यों का निर्वाचन भारत-मन्त्री की अनुमति से स्वयं करता है। उनमें भारत की व्यवस्थापिका सभा का प्रतिनिधित्व नहीं है। परन्तु प्रस्तावित संघ प्रणाली के अनुसार अब वायसराय की व्यवस्थापिका सभा के भी दो भाग कर दिए गए हैं। रक्षा, विदेशी नीति, धर्म और सीमा-प्रान्त का शासन ये कार्य सीधे तौर से वायसराय के हाथ में होंगे और इनके लिए नियुक्त तीन नामज़द सदस्यों पर भारतवर्ष की व्यवस्थापिका सभा (फिडरल एसेम्बली और कौन्सिल आफ़ स्टेट) का कोई नियन्त्रण न होगा। ये विषय सुरक्षित विषय कहलाएंगे।

हस्तान्तरित विषय—उपर्युक्त विषयों को छोड़ कर शेष सभी विषय हस्तान्तरित विषय कहलाएंगे और एक मन्त्रि मण्डल उनका संचालन किया करेगा। इस मन्त्रि-मण्डल के सदस्यों की संख्या दस से अधिक न हो सकेगी।

इनके अतिरिक्त गवर्नर जनरल के हाथ में अन्य शक्तियां भी रहेंगी। देश में शान्ति और व्यवस्था स्थापित रखना, सरकारी कर्मचारियों तथा देसी नरेशों के हितों की रक्षा करना; अल्पमत की भारतीय जातियों के अधि-

कारों और अँगरेज़ी व्यापारको सुरक्षित रखना, आर्थिक स्थिरता आदि बातें वायसराय के अधीन होंगी। व्यवस्थापिका सभा से पास किए गए बिलों को रद्द कराने और फेल किए बिलों को पास करने का उस का अधिकार पहले के समान जारी रहेगा। वह आर्डीनान्स भी जारी कर सकेगा और ज़रूरत पड़ने पर मन्त्रि-मण्डल या व्यवस्थापिका सभा के बिना भी भारत के शासन का पूर्ण संचालन कर सकेगा।

संघ की व्यवस्थापिका सभाएँ

भारतवर्ष के नए शासन-विधान के अनुसार केन्द्रीय संघ व्यवस्थापन का कार्य सम्राट् के सीधे प्रतिनिधि वायसराय तथा कौन्सिल आफ स्टेट और फिडरल असेम्बली नाम को दो सभाओं के सपुर्द है।

कौंसिल आफ़ स्टेट—इस सभा के सदस्यों की संख्या २६० होगी, जिनमें से १५६ सदस्य अंगरेज़ी भारत के प्रतिनिधि होंगे और १०४ सदस्य भारतीय रियासतों के। अंगरेज़ी भारत के १५६ प्रतिनिधियों में से १५० प्रतिनिधि गवर्नरों द्वारा तथा कमिश्नरों द्वारा शासित सूबों में से चुने जायंगे। शेष ६ की नियुक्ति वायसराय किया करेगा। प्रति तीसरे वर्ष कौन्सिल आफ स्टेट के एक तिहाई सदस्यों का नया निर्वाचन हुआ करेगा, इस तरह इस सभा में स्थायी अंश की प्रधानता रहेगी। अंगरेज़ी भारत के ३ हिस्सों का प्रति तीन वर्षों के बाद इस तरह निर्वाचन हुआ करेगा—

	क	ख	ग	योग
मद्रास	०	१०	१०	२०
बम्बई	८	०	८	१६
बंगाल	१०	०	१०	२०
युक्त प्रान्त	१०	१०	०	२०
पञ्जाब	८	८	०	१६
बिहार	०	८	८	१६
मध्यप्रान्त (बरार सहित)	०	८	०	८
आसाम	०	५	०	५
सीमाप्रान्त	०	०	५	५
सिन्ध	५	०	०	५
उड़ीसा	५	०	०	५
कुर्ग	०	०	१	१
अजमेर	०	०	१	१
दिल्ली	०	०	१	१
बलोचिस्तान	०	०	१	१
भारतीय ईसाई	१	०	१	२
ऐंग्लो इण्डियन	०	०	१	१
यूरोपियन	३	१	३	७
	५०	५०	५०	१५०

देशी रियासतों के सदस्यों की नियुक्ति भी इसी तरह तीन ग्रुपों में की जाया करेगी।

फिडरल असेम्बली—भारत-संघ की फिडरल असेम्बली में ३७५ सदस्य रहेंगे। इनमें से २५० सदस्य अंगरेज़ी

भारत के होंगे, १२५ देशी रियासतों के। असेम्बली का जीवन काल पाँच वर्षों का होगा। प्रान्तों के लिहाज़ से इस असेम्बली के सदस्यों की तालिका आगे दी गई है।

व्यवस्थापिका सभाओं का कार्य—बजट को छोड़ कर शेष कोई भी विषय पहले किसी सभा में पेश किया जा सकता है। यह बिल दोनों सभाओं से पास होकर वायसराय के पास पहुँचना चाहिए। वह या तो (क) बादशाह के नाम पर उसे स्वीकार कर लेगा, या (ख) बादशाह के विचार के लिए भेज देगा और या (ग) पुनर्विचार के लिए वापस कर देगा। यदि दोनों सभाओं में असहमति हो जाय, तो दोनों का एक साथ अधिवेशन किया जायगा और अधिवेशन में जो कुछ बहुमत से पास होगा, वही दोनों सभाओं की राय समझी जायगी।

बजट—बजट तथा आय-व्यय सम्बन्धी सभी बिल पहले फ़ेडरल असेम्बली में पेश किए जाएंगे और उसके बाद कौन्सिल आफ स्टेट में। दोनों सभाओं में मतभेद होने पर उनका सम्मिलित अधिवेशन किया जायगा। वायसराय के विशेष अधिकारों के सम्बन्ध में व्यवस्थापिका सभाएं कोई मत न दे सकेंगी।

साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व—भारतवर्ष की सभी व्यवस्थापिका सभाओं में साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व की प्रथा है। अर्थात् इस देश के निवासियों का विभाग धर्मों के आधार पर किया गया है। हिन्दुओं से आशा की जाती है कि वे हिन्दू को ही अपना प्रतिनिधि चुनेंगे, और

मुसलमानों से आशा की जाती है कि वे मुसलमानों को अपना नुमाइन्दा बनाएंगे। इसलिये हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, ऐंगलो इण्डियन और यूरोपियन इन सब का पृथक्-पृथक् प्रतिनिधित्व करने की प्रथा भारतीय व्यवस्थापिका सभाओं तथा अन्य निर्वाचित संस्थाओं में डाली गई है। परिणाम यह हुआ है कि भारत की जनता पृथक्-पृथक् भागों में बंटी हुई है। संसार के अन्य किसी भी देश में धर्मों के आधार पर सीटें निश्चित नहीं की जाती। परन्तु भारतवर्ष में इस बात को इतना आवश्यक समझा गया कि सन् १९१७ में कांग्रेस ने भी पृथक् साम्प्रदायिक निर्वाचन की प्रथा में ही देश का कल्याण समझा। गत आठ-दस वर्षों से कांग्रेस तथा हिन्दू इस साम्प्रदायिक निर्वाचन की प्रथा का विरोध कर रहे हैं। परन्तु देश की अल्पसंख्या, विशेष कर मुसलमानों की अधिक संख्या, सम्मिलित निर्वाचन के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं करती। इसी कारण पिछली राउण्ड टेबल कान्फ्रेन्स में हिन्दू तथा मुसलमान प्रतिनिधियों में, इसी बात पर कोई समझौता न हो सका था और उस समझौते के अभाव में इंग्लैण्ड के प्रधान मंत्री ने सीटों के बटवारे के सम्बन्ध में एक निर्णय दे दिया था, वह निर्णय अब 'कम्यूनल अवार्ड' (साम्प्रदायिक निर्णय) के नाम से प्रसिद्ध है। इस निर्णय के आधार पर कौन्सिल आफ स्टेट तथा फिडरल असैम्बली में इन सम्प्रदायों के लिहाज़ से प्रतिनिधियों की संख्या इस प्रकार रहा करेगी—

कौन्सिल ऑफ़ स्टेट

प्रान्त	जनरलसीटें	हरिजन	सिक्ख	स्त्रियां	मुसलमान	योग
मद्रास	१४	१	—	१	४	२०
बम्बई	१०	१	—	१	४	१६
बंगाल	८	१	—	१	१०	२०
युक्त-प्रान्त	११	१	—	१	७	२०
पंजाब	३	—	४	१	८	१६
बिहार	१०	१	—	१	४	१६
मध्यप्रान्त	६	१	—	—	१	८
आसाम	३	—	—	—	२	५
सीमा-प्रान्त	१	—	—	—	४	५
उड़ीसा	४	—	—	—	१	५
सिन्ध	२	—	—	—	३	५
बलोचिस्तान	—	—	—	—	१	१
दिल्ली	१	—	—	—	—	१
अजमेर	१	—	—	—	—	१
कुर्ग	१	—	—	—	—	१
ऐंग्लो इण्डियन	—	—	—	—	—	१
यूरोपियन	—	—	—	—	—	७
देसी ईसाई	—	—	—	—	—	२
योग	७५	६	४	६	४९	१५०

प्रान्त	जनरल सीटें कुल	जनरल सीटें हरिजन	सिक्ख	मुसलमान	एङ्लो-इंडियन	यूरोपियन	भारतीय ईसाई	व्यापार	ज़मीदार	मज़दूर	स्त्रिया	योग
मद्रास	१९	४	—	८	१	१	२	२	१	१	२	३७
बम्बई	१३	२	—	६	१	१	१	३	१	२	२	३०
बंगाल	१०	३	—	१७	१	१	१	३	१	२	१	३७
युक्तप्रान्त	१९	३	—	१२	१	१	१	—	१	१	१	३७
पंजाब	६	१	६	१४	—	१	१	—	१	—	१	३०
बिहार	१६	२	—	९	—	१	१	—	१	१	१	३०
मध्य प्रान्त	९	२	—	३	—	—	—	—	१	१	१	१५
आसाम	४	१	—	३	—	१	१	—	—	१	—	१०
सीमा-प्रान्त	१	—	—	४	—	—	—	—	—	—	—	५
उड़ीसा	४	१	—	१	—	—	—	—	—	—	—	५
सिन्ध	१	—	—	३	—	१	—	—	—	—	—	५
बलोचिस्तान	—	—	—	१	—	—	—	—	—	—	—	१
दिल्ली	१	—	—	१	—	—	—	—	—	—	—	२
अजमेर	१	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	१
कुर्ग	१	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	१
प्रान्त रहित	—	—	—	—	—	—	—	३	—	१	—	४
योग	१०५	१९	६	८२	४	८	८	११	७	१०	९	२५०

हरिजन और हिन्दू—सन् १९३५ के शासन विधान से हरिजनों के लिए विशेष सीटें सुरक्षित रख दी गई हैं। इन सीटों का निर्वाचन हिन्दू और हरिजन मिलकर किया करेंगे। हरिजन अपने में से ४,४ उम्मीदवार चुना करेंगे। इन्हीं उम्मीदवारों में से, हिन्दू और हरिजन मिलकर किसी एक व्यक्ति को बहुमत द्वारा प्रतिनिधि निर्वाचित किया करेंगे।

देशी रियासतें—फिडरल असेम्बली में देशी राज्यों के जो प्रतिनिधि जाया करेंगे, उन्हें महाराजा ही नामजद किया करेंगें। फिडरल असेम्बली के लिए रियासतों की आबादी के आधार पर उनकी सीटें निश्चित की गई हैं। बड़ी रियासतों को सीधेतौर से अपने प्रतिनिधि भेजने का अधिकार मिला है। उदाहरणार्थ हैदराबाद के सोलह प्रतिनिधि जाया करेंगे और मैसूर के सात। कौन्सल आफ़ स्टेट में प्रतिनिधियों की संख्या आबादी के आधार पर निश्चित नहीं की गई। वहां हैदराबाद को ५, मैसूर, काश्मीर, ग्वालियर और बड़ौदा को तीन-तीन, कलात, ट्रावनकोर, कोचीन, उदयपुर, जयपुर जोधपुर तथा कतिपय अन्य रियासतों को दो-दो, कुछ को एक-एक और बहुत छोटी रियासतों को ग्रुप बनाकर एक-एक सीटें दी गई हैं। ग्रुपों में रियासतों के महाराज मिलकर अपना प्रतिनिधि चुना करेंगे।

संघ व्यवस्थापिका सभाओं के कार्य—भारतवर्ष की कौन्सल आफ़ स्टेट तथा फिडरल असेम्बली के अधीन निम्नलिखित विषयों के सम्बन्ध में कानून बनाने का अधिकार होगा—

१. भारत की आन्तरिक रक्षा

२. बाह्य मामले

३. मुद्रा

४ भारतीय रेलवे

५. डाक और तार

६. तट-कर

७. इनकम टैक्स

प्रान्तीय सरकारें

प्रान्त—नए शासन-विधान के अनुसार भारतवर्ष को ११ बड़े प्रान्तों में विभक्त किया गया है। ये ११ गवर्नरों के प्रान्त हैं। इनके अतिरिक्त अँगरेज़ी बलोचिस्तान, दिल्ली, अजमेर, मारवाड़ और कुर्ग ये छोटे प्रान्त चीफ कमिश्नरों के प्रान्त कहलाते हैं। भारत के प्रान्तों की आबादी इस प्रकार है—

मद्रास	४, ६७, ४०, १०७
बम्बई (अदन सहित)	१, ८१, ६२, ४७५
बंगाल	५, ०१, १४, ००२
युक्त-प्रान्त	४, ८४, ०८, ७६३
पंजाब	२, ३५, ८०, ८५२
बिहार	३, २५, ५८, ०५६
उड़ीसा	८१, ७४, ०००
मध्य-प्रान्त और बरार	१, ५५, ०७, ७२३
आसाम	८६, २२, २५१

सीमा-प्रान्त	२४, २५, ०७६
सिन्ध	३८, ८७, ०००
बलोचिस्तान	४,६३,५०८
दिल्ली	६,३६,२४६
अजमेर-मारवाड़	५,६०,२६२
कुर्ग	१,६३,३२७
अण्डेमन आदि	२९,४६३
योग	२६,००,६३,१४१.

रहते हैं।

भारतवर्ष की करीब ९० प्रतिशत जनता गाँवों में रहती है। कुल मिलाकर २३१६ शहर हैं और ६,८५,६६५ गाँव हैं। शहरों में बसने वाले लोगों की संख्या (बर्मा को मिलाकर) ३९० लाख है और गाँवों में रहनेवालों की संख्या ३१ करोड़ ३८ लाख है।

भारतवर्ष की केन्द्रीय सरकार का अधिक सम्बन्ध शहरों के साथ है, परन्तु प्रान्तीय सरकारों का सीधा सम्बन्ध गाँवों के साथ भी रहता है। नागरिकता के अध्याय में गाँवों के शासन का ज़िक्र किया जा चुका है, यहाँ प्रान्तीय सरकार की शासन-प्रणाली का वर्णन किया जायगा।

शासन

गवर्नर—प्रान्तों के गवर्नरों की नियुक्ति भी सम्राट द्वारा होती है, और वही सम्राट की ओर से प्रान्त के

शासन का मुखिया होता है। शासन के कार्य में वह मन्त्रियों की सलाह पर चलता है। गवर्नर के विशेष अधिकारों को छोड़कर शेष सभी कार्यों के लिये मन्त्री नियुक्त किए जाते हैं।

गवर्नर के विशेषाधिकार—प्रान्त में शान्ति कायम रखने तथा अल्पमतों के अधिकारों की रक्षा के लिए गवर्नर को बहुत से विशेषाधिकार दिए गए हैं। वह चाहे तो सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल को बरखास्त कर सकता है और प्रान्त के शासन की बागडोर सीधे तौर से अपने हाथ में ले सकता है। उसे आर्डीनान्स जारी करने का अधिकार भी दिया गया है। वायसराय गवर्नरों को जो आज्ञाएं दे, उनके अनुसार कार्य करना उनका कर्तव्य है। आवश्यकता पड़ने पर वायसराय जो आर्डीनान्स प्रकाशित करेगा, उनका पालन प्रान्तों के गवर्नरों की सहायता से ही करवाया जायगा।

मन्त्रि-मण्डल—जैसा कि पहले कहा जा चुका है, माण्डफोर्ड सुधारों के अनुसार भारतवर्ष के प्रान्तों में द्वैध शासन प्रणाली थी, परन्तु अब प्रान्तों के शासन के सम्बन्ध का कोई विषय सुरक्षित नहीं रहा। इस तरह प्रान्तों में शासन पर व्यवस्थापिका सभाओं का पूरा नियन्त्रण हो गया है। प्रत्येक प्रान्त में व्यवस्थापिका सभा के बहुमत का नेता प्रधानमन्त्री नियुक्त किया जाता है और इस प्रधानमन्त्री की सलाह से प्रान्त का गवर्नर आवश्यकतानुसार ४ से लेकर १२ मन्त्री नियुक्त करता है। इन मन्त्रियों का वेतन व्यवस्थापिक

सभा द्वारा स्वीकार किया जाता है। किसी एक मन्त्री या सम्पूर्ण मन्त्रीमण्डल पर व्यवस्थापिका सभा द्वारा अविश्वासका प्रस्ताव पास हो जाने की दशा में मन्त्रि-मण्डल को त्यागपत्र दे देना आवश्यक है। प्रधानमन्त्री इस मन्त्रि-मण्डल का नेता होता है, प्रान्त का सम्पूर्ण शासन उसी के अधीन होता है। प्रान्तों का यह मन्त्रि-मण्डल एक ओर गवर्नरों के सामने उत्तरदायी होता है और दूसरी ओर व्यवस्थापिका सभा के सामने।

नए विधान का व्यावहारिक रूप

सन १९३७ के चुनाव—कांग्रेस भारतवर्ष की सबसे बड़ी राजनीतिक संस्था है। सन् १९३५ के शासन विधान के निर्माण में कांग्रेस ने कोई सहयोग नहीं दिया था। उन दिनों वह सरकार के विरुद्ध निष्क्रिय प्रतिरोध और असहयोग की नीति का अनुसरण कर रही थी। परन्तु सन् १९३५ के प्रारम्भ में प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं के जो चुनाव हुए, उनमें देश के अन्य सभी राजनीतिक दलों के साथ कांग्रेस ने भी पूरी दिलचस्पी ली। परिणामतः मद्रास, बम्बई, युक्त-प्रान्त, बिहार, मध्यप्रान्त और उड़ीसा में कांग्रेस का पूर्ण बहुमत आ गया और बंगाल, आसाम तथा सीमाप्रान्त में कांग्रेस दल अन्य सम्पूर्ण दलों से बड़ी संख्या में निर्वाचित हुआ। पंजाब में युनियनिस्ट पार्टी का पूर्ण बहुमत आया और सिन्ध में कोई दल पूर्ण बहुमत नहीं प्राप्त कर सका।

काम चलाऊ मन्त्रि-मण्डल—प्रथम एप्रिल सन् १९३७

से भारतवर्ष में नए शासन-विधान का प्रारम्भ हुआ। उस से पहले मद्रास, बम्बई, युक्तप्रान्त, बिहार, मध्यप्रान्त, उड़ीसा, बंगाल और आसाम में प्रान्तों के गवर्नरों ने कांग्रेस दलों के नेताओं को अपना-अपना मन्त्रिमंडल स्थापित करने को निमन्त्रित किया, परन्तु कांग्रेस ने मन्त्रिमण्डल स्थापित करने से इन्कार कर दिया। तब लाचार होकर गवर्नरों ने दूसरे दलों के नेताओं को इस कार्य के लिए बुलाया। बंगाल में मुस्लिम लीग तथा प्रजापार्टी मिल गई और उनका मन्त्रि-मण्डल स्थापित हो गया। आसाम में मुसलमानों ने हरिजन तथा यूरोपियन ग्रुपों की सहायता से अपना मन्त्रिमण्डल कायम कर लिया। सीमाप्रान्त में मुस्लिम तथा हिन्दू दलों के सहयोग से मन्त्रि मंडल बन गया। पंजाब में युनियनिस्ट-पार्टी का पूर्ण बहुमत था ही। सिन्ध में कतिपय मुस्लिम दलों तथा हिन्दू पार्टी के सहयोग से मन्त्रिमण्डल बन गया। शेष छः प्रान्तों मद्रास, बम्बई, युक्तप्रान्त, बिहार, मध्यप्रान्त, उड़ीसा, में भी अल्पमतों के कामचलाऊ मन्त्रिमण्डल स्थापित हो गए।

समझौता—परन्तु ये ६ कामचलाऊ मन्त्रिमण्डल स्थायी नहीं रह सकते थे, इससे बृटिश सरकार के प्रति-निधियों तथा महात्मा गांधी में इस विषय पर एक लम्बी बहस और पत्रव्यवहार के बाद कांग्रेस और अंग्रेज़ सरकार में इस आशय का एक तरह का समझौता होगया कि प्रान्तीय गवर्नर मन्त्रिमण्डल के कार्यों में, जहां तक सम्भव

होगा, हस्तक्षेप नहीं करेंगे। तब कांग्रेस ने अपने मन्त्रिमण्डल स्थापित करने का निश्चय कर लिया।

वर्तमान परिस्थिति—जुलाई सन् १९३७ में उपर्युक्त ६ प्रान्तों में कांग्रेस के मन्त्रिमण्डल स्थापित हो गए। शेष प्रान्तों में कांग्रेस दल विरोधी दल का काम करने लगे। कुछ ही समय के बाद सीमाप्रान्त के तत्कालीन मन्त्रिमण्डल के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास हो गया और तब वहां भी कांग्रेस ने कतिपय अन्य दलों के सहयोग से अपना मन्त्रिमण्डल कायम कर लिया। तदनन्तर सिन्ध के मन्त्रि-मण्डल को भी इसी तरह त्यागपत्र देना पड़ा। सिन्ध में जो मन्त्रिमण्डल कायम हुआ उसने कांग्रेस की नीति को स्वीकार करने का वचन दिया। उसे कांग्रेस का सहयोग अभी तक प्राप्त है और इसी सहयोग के बल पर वह कायम है। अक्तूबर सन् १९३८ में आसाम में भी कतिपय अन्य दलों के सहयोग से कांग्रेस का मन्त्रिमण्डल कायम हो गया। इस तरह भारत के नौ प्रान्तों में कांग्रेस के अथवा उसके सहयोग पर आश्रित मन्त्रिमण्डल कायम हैं; शेष दो प्रान्तों, पंजाब और बंगाल में, क्रमशः युनियनिस्ट और प्रजापार्टी तथा मुस्लिमलीग के। अब ये दोनों मन्त्रिमण्डल मुस्लिम लीग के मन्त्रि-मण्डल कहे जाने लगे हैं, क्योंकि इनके मुसलमान सदस्य मुस्लिम लीग के सदस्य बन गए हैं।

इस तरह भारतवर्ष में अब एक प्रकार का प्रान्तीय स्वराज्य स्थापित है और सभी दिशाओं में भारतवर्ष के ग्यारह प्रान्त अपनी-अपनी सामर्थ्य, रुचि और नीति के अनुसार यथेष्ट

उन्नति कर रहे हैं। देश में पूर्ण शान्ति और व्यवस्था कायम है।

व्यवस्थापिका सभाएं—निम्नलिखित प्रान्तों में दो व्यवस्थापिका सभाएं हैं—मद्रास, बम्बई, बंगाल, युक्तप्रांत, बिहार और आसाम। इनके नाम हैं—१. लैजिस्लेटिव कौन्सिल-ऊपरली सभा और २. लैजिस्लेटिव असेम्बली-निचली सभा। शेष प्रान्तों में लेजिस्लेटिव असेम्बली नाम से एक ही व्यवस्थापिका सभा है। इन सभाओं का निर्वाचन साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के आधार पर होता है। प्रत्येक प्रान्त को सीटों की संख्या के अनुसार, विभिन्न इलाकों में बांटा गया है, और यह निश्चित कर दिया गया है कि अमुक हलके से मुसलमान वोटर एक मुसलमान को लेजिस्लेटिव असेम्बली में भेज सकते हैं।

व्यवस्थापिका सभाओं के चुनाव—सन् १९१९ के शासन विधान में मतदाता बनने के लिए जो कानून थे, उन्हें अब बहुत व्यापक और सुगम बना दिया गया है। परिणाम यह हुआ है कि सम्पूर्ण भारतवर्ष में पुरुष वोटरों की संख्या ७० लाख से २ करोड़ ९० लाख हो गई है और स्त्री-वोटरों की संख्या ३ लाख १५ हज़ार से ५० लाख हो गई है। अर्थात् कुल मिला कर १९१९ की अपेक्षा १९३५ में वह करीब ४६० प्रतिशत बढ़ाई गई है। सन् १९३७ के प्रारम्भ में प्रान्तीय सभाओं के जो निर्वाचन हुए, उनमें सम्पूर्ण देश ने बहुत दिलचस्पी ली।

कार्य-पद्धति—गवर्नर को यह अधिकार प्राप्त है कि

वह जब चाहे व्यवस्थापिका सभाओं का अधिवेशन बुलाए, और जब चाहे उन्हें स्थगित या समाप्त कर दे। असेम्बलियों के निर्वाचन आमतौर से पांच वर्ष के लिए होते हैं। परन्तु गवर्नर इस अवधि को कुछ समय के लिए घटा या बढ़ा भी सकता है। लेजिस्लेटिव कौन्सिल के एक तिहाई सदस्यों का चुनाव प्रति तीन वर्षों के बाद हुआ करेगा। कोई भी बिल (बजट को छोड़कर) दोनों सभाओं में से पहले किसी भी सभा में पेश किया जा सकता है, परन्तु उसे गवर्नर के पास भेजने पूर्व उसका दोनों सभाओं में पास होना ज़रूरी है। दोनों सभाओं में मतभेद होने की दशा में दोनों का सम्मिलित अधिवेशन बुलाया जाता है और वहां बहुमत से जो निर्णय होता है, वह दोनों सभाओं का निर्णय माना जाता है। गवर्नर किसी बिल को (क) स्वीकार कर सकता है, या (ख) गवर्नर-जनरल के पास विचारार्थ भेज सकता है अथवा (ग) सभाओं को पुनर्विचारार्थ वापस कर सकता है। बजट पास करने का काम लेजिस्लेटिव असेम्बली का है। ऊपर की सभा उस पर विचार कर सकती है, परन्तु उसे पास या फेल नहीं कर सकती।

प्रान्तीय सभाओं के कार्य—प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाएँ निम्नलिखित विषयों के सम्बन्ध में कानून बना सकती हैं—

१. शान्ति और व्यवस्था की स्थापना
२. स्थानीय सरकार (म्युनिसिपैलिटी आदि)

३. सार्वजनिक स्वास्थ्य

४ शिक्षा

५ सिंचाई

६. खेती और भूमि का लगान

७ इनकम टैक्स को छोड़ कर शेष टैक्स

निम्नलिखित विषयों पर प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाएं तथा केन्द्रीय फिडरल असेम्बली और कौन्सिल आफ स्टेट दोनों ही क़ानून बना सकती हैं—

१ फौज़दारी कानून और कार्रवाही

२ दीवानी क़ानून

३. कारखाने

४ मज़दूर संघ

५. बिजली

इन उपर्युक्त विषयों पर संघ की सभाएँ सम्पूर्ण भारत के लिए कानून बना सकती हैं और प्रान्तों की व्यवस्थापिका सभाएं केवल अपने प्रान्त के लिए। यदि कही इनके सम्बन्ध में संघ के और प्रान्त नियमों में विरोध हो जाय तो संघ का नियम ही प्रामाणिक माना जायगा। हाँ, वायसराय या सम्राट् इस सम्बन्ध में किसी प्रान्त को विशेष अनुमति दे सकते हैं।

प्रान्तीय लेजिस्लेटिव असेम्बली की सीटें

प्रान्त	जनरल		पिछड़ी जातिया	सिक्ख	मुसलमान	एंग्लो-इंडियन	यूरोपियन	देसी ईसाई	व्यापार व्यवसाय	जमींदार	युनिवर्सिटी	मज़दूर	स्त्रियां	योग
	कुल	हरिजन												
मद्रास	१४६	३०	१	—	२८	२	३	८	६	६	१	६	८	२१५
बम्बई	११४	१५	१	-	२९	२	३	३	७	२	१	७	६	१७५
बंगाल	७८	३०	—	—	११७	३	११	२	१९	५	२	८	५	२५०
युक्तप्रान्त	१४०	२०	—	—	६४	१	२	२	३	६	१	३	६	२२८
पंजाब	४२	८	—	३१	८४	१	१	२	१	५	१	३	४	१७५
बिहार	८६	१५	७	—	३९	१	२	१	४	४	१	३	४	१५२
मध्यप्रान्त	८४	२०	१	—	१४	१	१	—	२	३	१	२	३	११२
आसाम	४७	७	९	—	३४	—	१	१	११	—	—	४	१	१०८
सीमाप्रान्त	९	—	—	३	३६	—	—	—	—	२	—	—	—	५०
उड़ीसा	४४	६	५	—	४	—	—	१	१	२	—	१	२	६०
सिन्ध	१८	—	—	—	३३	—	२	—	२	२	—	१	२	६०

(क) बम्बई मे जनरल सीटें मराठों के लिये हैं। (ख) पंजाब के ज़मीदारों में से एक तुमान्दार ज़रूर जाना चाहिए।
(ग) आसाम, उड़ीसा के अतिरिक्त शेष सभी प्रान्तों में स्त्रियों की सीटें साम्प्रदायिक निर्वाचन द्वारा भरी जाती हैं।

प्रान्तीय लैजिस्लेटिव कौन्सिलें

प्रान्त	लैजिस्लेटिव असेम्बली द्वारा	जनरल	मुसल्मान	यूरोपियन	भारतीय ईसाई	गवर्नर द्वारा भरी जाने वाली	योग
मद्रास	—	३५	७	१	३	८ से कम नहीं १० से अधिक नहीं	कम से कम ५४ अधिक से अधिक ५६
बम्बई	—	२०	५	१	—	३ से कम नहीं ४ से अधिक नहीं	कम से कम २६ अधिक से अधिक ३०
बंगाल	२७	१०	१७	३	—	६ से कम नहीं ८ से अधिक नहीं	कम से कम ६३ अधिक से अधिक ६५
युक्त प्रान्त	—	३४	१७	१	—	६ से कम नहीं ८ से अधिक नहीं	कम से कम ५८ अधिक से अधिक ६०
बिहार	१२	९	४	१	—	३ से कम नहीं ४ से अधिक नहीं	कम से कम २९ अधिक से अधिक ३०
आसाम	—	१०	६	२	—	३ से कम नहीं ४ से अधिक नहीं	कम से कम २१ अधिक से अधिक २२

न्याय

हाईकोर्ट—सैशन कोर्टों तक का वर्णन नागरिकता के अध्याय में किया जा चुका है। उनके ऊपर प्रत्येक प्रान्त में एक-एक हाईकोर्ट है। इनमें कार्य के अनुसार जजों की नियुक्ति की जाती है। इस समय तक कलकत्ता, मद्रास, बम्बई, अलाहाबाद, लाहौर, पटना और नागपुर में हाईकोर्ट विद्यमान हैं। हाईकोर्ट का शासन तथा प्रान्त के न्यायालयों का निरीक्षण चीफ जस्टिस के ही अधीन होता है। चीफ जस्टिस अपने प्रान्त के न्याय-विभाग का प्रधान शासक होता है। वह किसी के अधीन नहीं। इन हाईकोर्टों में निचली कोर्टों के निर्णयों के खिलाफ अपीलें भी की जाती हैं।

फ़िडरल कोर्ट—सन् १९३५ के भारतीय शासन-विधान से अनुसार इस देश में एक फिडरल कोर्ट की स्थापना भी कर दी गई है। इस का शासन एक चीफ़ जस्टिस के अधीन है। चीफ जस्टिस के अतिरिक्त इस कोर्ट में ६तक अन्य जज रह सकते हैं। हाईकोर्टों के कतिपय निर्णयों के खिलाफ़ अपीलें सुनने के अतिरिक्त प्रान्तों के आपस के झगड़ों का निर्णय करना भी इसी कोर्ट का काम है। फ़िडरल कोर्ट के किसी-किसी निर्णय के खिलाफ़ इंग्लैण्ड की प्रिवी कौन्सिल में अपील की जा सकती है।

देसी राज्य

फिडरेशन के अंग—पिछली राउण्ड टेबल कान्फ्रेन्स में जब देशी-राज्यों के महाराजाओं ने भारतीय संघ का

सदस्य होना स्वीकार कर लिया, तब इस घटना को भारत के इतिहास में बड़ा महत्वपूर्ण माना गया था। अब देसी रियासतें भारतीय राज्य-संघ का आन्तरिक भाग बन गई हैं और भविष्य में संघ के कानून आदि बनाने में उनका बहुत महत्वपूर्ण भाग रहा करेगा।

तीन श्रेणियां—भारत के देसी-राज्यों की तीन श्रेणियां हैं। (१) ऐसे देसी-राज्य जिनका सम्बन्ध सीधा वायसराय से है। इनमें से प्रत्येक में एक रेज़ीडेण्ट रहता है। हैदराबाद, मैसूर, बड़ौदा और काश्मीर—यें चार रियासतें इस श्रेणी में आती है। (२) वे राज्य जिनका वर्गीकरण अलग-अलग समूहों अथवा 'एजन्सो' में कर दिया गया है और उनका सम्बन्ध अपनी एजन्सी के 'एजण्ट टू दी गवर्नर जनरल, से रहता है। राजपूताना, बलोचिस्तान और मध्यभारत की इन तीन एजन्सियों में कुल मिलाकर ४९ छोटी-छोटी रियासतें हैं। (३) वे रियासतें, जो प्रान्तीय सरकारों के अधीन हैं। इनकी संख्या ५०० के लगभग है।

भारतीय रियासतों के क्षेत्रफल का योग ७,१२,५०८ वर्ग मील है, अर्थात् सम्पूर्ण भारतवर्ष का एक तिहाई भाग। उनकी आबादी ८,१३,१०,८८५ है, अर्थात् भारत की-आबादी का एक चौथाई से भी कम भाग। ये रियासतें अपने आन्तरिक मामलों में काफी अंश तक स्वाधीन है। इस समय तक अनेक रियासतों में प्रजातन्त्र शासन के आधार पर व्यवस्थापिका सभाओं का निर्माण हो चुका है।

मुख्य रियासतें—भारतवर्ष की प्रमुख रियासतों का क्षेत्रफल और आबादी इस प्रकार है—

	क्षेत्रफल	आबादी
बड़ौदा	८,१६४	२४,४३,००७
ग्वालियर	२६,३६७	२५,२३,०७०
हैदराबाद	८२,६९८	१,४४,३६,१४८
काश्मीर-जम्मू	८४,५१६	३६,[illegible]६,२४३
कोचीन	१,४८०	१२,०५,०१६
ट्रावनकोर	७,६२५	५०,९५,९७३
मैसूर	२९,३२६	६५,५७,३०२
पटियाला	५,९३२	१६,२५,५२०
इन्दौर	९,९०२	१३,२५,०००

महिला जगत

(४)

वैदिक स्त्रियाँ—आज से हज़ारों साल पहले भारत-वर्ष को नारी वेद का यह मन्त्र गाया करती थी—

'तामद्य गाथा गास्यामि यस्त्रीणा उत्तमं यशः'

—मैं आज उस गाथा का गीत गाऊँगी, जिसमें स्त्रियों के सर्वोत्तम यश का वर्णन है!—

भारतवर्ष की स्त्रियों का यह सर्वोत्तम यश क्या था? वेद के अपने शब्दों में घर की महारानी, घर की साम्राज्ञी बनकर रहना ही स्त्री का सब से बड़ा यश माना जाता था। तब घर के मामलों में पुरुषों का बहुत कम दखल था। वे जो कुछ कमाकर लाते थे, सब गृहस्वामिनी के चरणों में अर्पण कर देते थे और वही घर के प्रत्येक सदस्य को, उसकी आवश्यकताओं के अनुसार, यथायोग्य धन, वस्त्र, भोजन आदि दिया करती थीं।

वैदिक काल की स्त्रियों का कार्यक्षेत्र केवल घर तक ही सीमित नहीं था। उन्हें बाक़ायदा शिक्षा दी जाती थी, और वे मनुष्य जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी यथाशक्ति दिलचस्पी लेती थीं। गार्गी नाम की एक महिला ने राजा जनक की सभा के सम्पूर्ण विद्वानों को इस बात का खुला चैलेंज दे दिया था कि ब्रह्मविद्या जैसे कठिन विषय पर कोई उससे शास्त्रार्थ कर ले। उस ज़माने में स्त्रियों को काफ़ी स्वतन्त्रता भी थी। वे अपने जीवन-संगी का चुनाव स्वयं किया करती थीं और इस उद्देश्य से स्वयंवर करने की प्रथा भी प्रचलित थी।

मध्ययुग में स्त्रियों की दशा—परन्तु उसके बाद इस देश में स्त्रियों की स्थिति नीची होती चली गई। महाभारत में इस बात के प्रमाण हैं कि तब स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा बहुत नीची निगाह से देखा जाने लगा था। उसके बाद क्रमशः मध्ययुग में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति और भी अवनत हो गई। मध्ययुग में उन्हें मूर्ख, हठी और निर्बल समझा जाने लगा। स्त्रियों को पुरुष अपनी जायदाद मानने लगे। बहुविवाह की प्रथा और भी भयंकर रूप धारण कर गई। धनी पुरुष बहुत-सी स्त्रियों से एक साथ शादी करने लगे और स्त्रियों को किसी तरह की स्वाधीनता नहीं रही। इतना ही नहीं, क्रमशः विधवाओं के लिए सती-प्रथा जारी कर दी गई। पति के देहान्त के बाद विधवा स्त्रियाँ प्रायः पति की चिता में जलकर शरीरत्याग कर देती थीं।

संसार के अन्य देशों में—संसार के प्रायः सभी अन्य देशों में प्राचीन समय में स्त्रियों की स्थिति पुरुषों की अपेक्षा बहुत नीची मानी जाती थी। प्रायः उन्हें जायदाद का उत्तराधिकार नहीं मिलता था। आर्थिक दृष्टि से वे पुरुषों पर ही निर्भर करती थीं। स्त्री प्रायः पुरुष की सम्पत्ति ही समझी जाती थी। उसकी स्वतन्त्र सत्ता या स्वतन्त्र व्यक्तित्व नहीं था।

नया युग—उन्नीसवीं सदी से यूरोप की स्त्रियों में यह लहर चली कि स्त्रियों का स्थान केवल घर के अन्दर तक ही सीमित नहीं है, उन्हें इस बात का पूरा अधिकार होना चाहिए कि मनुष्य जीवन के प्रत्येक कार्य में वे सहयोग दे सकें। परिणाम यह हुआ कि पश्चिम के सभी देशों में नारी-जागृति आन्दोलन ज़ोर पकड़ गया। और अब स्थिति यह आ गई है कि संसार के सभ्य देशों में स्त्रियाँ बहुत से कार्य-क्षेत्रों में पुरुषों का मुकाबला कर रही हैं।

आर्थिक पराधीनता—प्राचीन काल में कहीं भी स्त्रियों को अपनी रोज़ी कमाने की दृष्टि से स्वाधीनता नहीं रही। समाज और परिवार में चाहे उनकी कितनी ही प्रतिष्ठा क्यों न रही हो, आर्थिक दृष्टि से वे पुरुष के अधीन ही रही हैं। मनुस्मृति के अनुसार स्त्री कभी आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र नहीं रह सकती। बचपन में वह पिता द्वारा पाली-पोसी जाती है; युवावस्था में पति उसका भरण-पोषण करता है और बुढ़ापे में वह पुत्र के अधीन रहती है।

स्त्रियों की अवनति का कारण—अनेक विचारकों की राय है कि स्त्री की आर्थिक पराधीनता के कारण ही धीरे-धीरे पुरुष ने उसे अपना गुलाम बना लिया। एक व्यक्ति जब सभी तरह के कष्ट झेल कर अपनी कमाई से किसी दूसरे व्यक्ति को पालता है, तब स्वभावतः उसकी इच्छा होती है कि पाला जानेवाला व्यक्ति उसकी इज़्ज़त करे, उसकी आज्ञा में रहे। जिस व्यक्ति को पाला जा रहा होता है, उसके जी में भी, अज्ञातरूप से यह भावना स्वयं उत्पन्न हो जाती है कि जो व्यक्ति अपनी कमाई से उसका पालन कर रहा है, वह उससे अधिक श्रेष्ठ है, उसकी अपेक्षा बड़ा है। स्त्री और पुरुष में चाहे परस्पर शुरू-शुरू में कितनी ही मित्रता और कितने ही स्नेह का सम्बन्ध क्यों न रहा हो, परन्तु स्त्री अपने गुज़ारे के लिए पुरुष पर आश्रित तो थी ही। धीरे-धीरे स्वभावतः इस परिस्थिति का प्रभाव यह हुआ कि पुरुष अपने को स्त्री की अपेक्षा बहुत बडा समझने लग गया और स्त्री ने स्वयं ही आत्म-समर्पण कर दिया, अपनी पराजय स्वीकार कर ली और वह अपने को पुरुष की अपेक्षा छोटा और उसके सन्मुख अपने को असमर्थ समझने लगी।

आर्थिक स्वाधीनता के लिए प्रयत्न—इस नए युग में पश्चिम की स्त्री यह समझ गई है कि उसकी पराधीनता और हीनता का असली कारण यह है कि वह आर्थिक दृष्टि से पुरुष पर निर्भर करती है। इस कारण आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करना उसने अपना प्रथम ध्येय बनाया।

पहले-पहले पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ स्कूलों में पढ़ाने आदि का कार्य करने लगीं। उसके बाद नर्सिंग का काम भी स्त्रियों ने सँभाल लिया। आज यूरोप-भर में निम्नलिखित कार्यों के सम्बन्ध में यह समझा जाने लगा है कि ये काम पुरुष की अपेक्षा स्त्री अधिक अच्छा कर सकती है—नर्सिंग (रोगियों की सेवा-सुश्रुषा); टाइप करना; सामान बेचने का काम करना; टिकटें देना, छोटे बच्चों को पढ़ाना और पालना आदि।

राजनीतिक समानाधिकार के लिए प्रयत्न— पुराने ज़माने में संसार-भर के किसी भी देश में स्त्रियाँ राजनीतिक कार्यों में भाग नहीं लेती थीं। यह क्षेत्र उनकी पहुँच के बाहर समझा जाता था। संसार के प्राचीन इतिहास में अनेक देशों में कभी-कभी महारानियों का शासन जरूर रहा है, परन्तु वे अपवाद-स्वरूप होती थीं। हिन्दोस्तान में गुलाम-वंश की रज़िया बेगम के खिलाफ मुख्यतः इसी कारण विद्रोह हो गया था कि वह स्त्री थी। जिन थोड़ी-बहुत रानियों ने प्राचीन काल में शासन किया, उसे, पुरुषों का राज-वंश कायम रखने की भावना से ही पुरुष-जाति ने सहन किया था। परन्तु आज के संसार में स्त्री और पुरुष के समानाधिकार की लहर इतनी जोर के साथ उठी है कि संसार के प्रायः सभी सभ्य देशों में स्त्रियों को वोट देने का अधिकार मिल गया है और सभी सभ्य देशों की राजसभाओं में स्त्रियाँ भी सदस्य चुनी जाती हैं। उन्हें मन्त्रि-मण्डल में भी लिया जाने लगा है।

भारतवर्ष में स्त्रियों की संख्या—इस देश में स्त्री की अपेक्षा पुरुष का मान बहुत अधिक बढ़ गया था। लड़की को माँ-बाप पर एक तरह का बोझ समझा जाने लगा था। इसका एक प्रभाव यह भी हुआ है कि भारतवर्ष में स्त्रियों की संख्या पुरुषों की अपेक्षा करीब एक करोड कम है। इस देश की कुल जन-संख्या (वर्मा को मिलाकर) ३५,२९,८६,८७६ है। इनमें से १७,१०,६४,६६२ स्त्रियाँ है और १८,१६,२१ ९६२ पुरुष हैं।

स्त्रियों की वर्तमान स्थिति—भारतीय स्त्रियाँ अब भी काफी पिछड़ी हुई दशा में हैं। यद्यपि सती-प्रथा यहाँ बहुत समय से कानून-द्वारा बन्द कर दी जा चुकी है और विधवा-विवाह जारी हो गए हैं, तथापि अनेक दृष्टियों से भारतीय स्त्रियाँ संसार की स्त्रियों से पिछड़ी हुई दशा म हैं। यहाँ अभी शिक्षा का प्रसार बहुत कम हुआ है। स्त्रियों पर अभी तक पुरुष का अधिकार माना जाता है। विवाह आदि में स्त्रियों को किसी तरह की स्वाधीनता नहीं दी जाती। साधारण भारतीय घरों मे अभी तक माँ बाप लड़की की शिक्षा और पालन-पोषण पर उतना ध्यान नहीं देते, जितना वे अपने लडकों पर देते हैं।

जागृति की लहर—फिर भी यह कहा जा सकता है कि भारत की स्त्रियों में जागृति की लहर चल पड़ी है। वे अपने अधिकार समझने लगी हैं। आर्यसमाज, ब्रह्म-समाज आदि धार्मिक तथा कांग्रेस आदि राजनीतिक संस्थाओं ने इस नारी-जागृति-आन्दोलन को बड़ी सहायता

पहुचाई है। भारतवर्ष में भी अब अखिल-भारतीय महिला-संघ की स्थापना हो चुकी है और उसकी शाखाएँ देश के कोने-कोने में खुलती जा रही हैं।

शिक्षा - लड़कियों में शिक्षा का प्रचार बड़े जोरों से बढ रहा है। शहरों में रहने वाले मध्यस्थिति के लोग अपनी लडकियों को शिक्षा देना आवश्यक समझने लगे हैं। विवाह के लिए भी पढ़ी-लिखी लडकियों को अधिक पसन्द किया जाने लगा है, क्योंकि वे अधिक अच्छी जीवन संगिनी बन सकती हैं। इससे स्त्री-शिक्षा के आन्दोलन को और भी अधिक सहायता मिली है। सन् १९३० में स्त्रियों के स्कूलों, कालेजों में निम्नलिखित संख्या लडकियों की थीं—

	संस्थाओं की संख्या	लडकियाँ
प्राइमरी स्कूल	३१,४०८	११,९३,३१२
गैर-सरकारी स्कूल	३,६९५	७८,५९६
स्पेशल क्लासेंस	९६४	१५,२२७
मिडल स्कूल	७७६	१,०६,३४०
हाई स्कूल	३०२	७२,५६७
आर्ट्स कालेज	१९	१,५१६
व्यावसायिक कालेज	८	२४०

सन् १९३९ तक यह संख्या बहुत अधिक बढ़ गई है। आर्ट्स कालेजों में पढ़ने वाली लड़कियों की संख्या अब ४००० से भी ऊपर निकल गई है। इनके अतिरिक्त लाखों की संख्या में लड़कियाँ अपने घरों में माँ-बाप या भाई-बहनों से पढ़ा करती हैं। अनेक स्थानों पर सहशिक्षा भी शुरू

हो गई है। इस तरह स्त्री-शिक्षा का प्रचार बड़े वेग से हो रहा है।

वोट देने का अधिकार—भारतीय स्त्रियों को वोट देने के अधिकार का प्रारम्भ सन् १९१९ के सुधारों से हुआ था। तब प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओं को इस बात की स्वाधीनता दी गई थी कि यदि वे चाहें तो अपने-अपने प्रान्त में स्त्रियों को वोट देने का अधिकार दे दें। फलतः अँगरेज़ी भारत के सभी प्रान्तों तथा ४ देसी रियासतों में भी उन्हें वोट देने का अधिकार मिल गया।

मौण्ट-फोर्ड सुधारों के अनुसार स्त्री वोटरों की संख्या ३,१५,००० थी। सन १९३५ के शासन-विधान के अनुसार वह संख्या बढ़ाकर ६० लाख कर दी गई है। अर्थात् उसे करीब १८ गुना कर दिया गया है।

स्त्री-सदस्याएँ—भारतवर्ष की म्युनिसिपैलिटियों तथा कारपोरेशनों में स्त्रियाँ पहले भी चुनी जाती थी, यद्यपि उनकी संख्या बहुत कम होती थी। पिछले सुधारों के कार्यकाल में कतिपय स्त्रियाँ प्रान्तीय कौन्सिलों में भी पहुचीं। मद्रास, युक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, पंजाब, बम्बई आदि की व्यवस्थापिका सभाओं में स्त्री-सदस्याएँ भी रहीं। परन्तु नए सुधारों के अनुसार तो प्रत्येक प्रान्त में स्त्रियों के लिए कुछ सीटें सुरक्षित कर दी गई हैं। भारत की स्त्रियाँ अपने निर्वाचन के लिए साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व नहीं चाहती थीं। परन्तु व्यवहार में, उनके चुनाव में भी साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व की नींव डाल दी गई है। प्रान्तीय

लैजिस्लेटिव असेम्बलियों में स्त्रियों की सीटें इस तरह सुरक्षित की गई हैं—

प्रान्त	जनरल	सिक्ख	मुसल्मान	ऐंग्लो-इण्डियन	देसी ईसाई	योग
मद्रास	६	—	१	—	१	८
बम्बई	५	—	१	—	१	६
बंगाल	२	—	२	१	—	५
युक्त-प्रान्त	४	—	२	—	—	६
पंजाब	१	१	२	—	—	४
बिहार	३	—	१	—	—	४
मध्यप्रान्त	३	—	—	—	—	३
आसाम	१	—	—	—	—	१
सीमा-प्रान्त	—	—	—	—	—	—
उड़ीसा	२	—	—	—	—	२
सिन्ध	१	—	१	—	—	२

विभिन्न पेशों में स्त्रियां—भारतवर्ष की महिलाओं ने विभिन्न व्यवसायों में प्रवेश करना शुरू कर दिया है। स्वभावतः सबसे पहले नर्सिंग और चिकित्सा के पेशे की ओर उनका ध्यान गया और इस समय भारतवर्ष के विभिन्न हस्पतालों में जो शिक्षिता नर्सें काम कर रही हैं, उनमें भारतीय स्त्रियों की संख्या बहुत काफी है। क़रीब ६०० लड़कियां विभिन्न मैडिकल कालेजों में बाक़ायदा चिकित्सा की उच्च शिक्षा प्राप्त कर रही हैं। अन्य उद्योग धन्धों में भी स्त्रियों की काफ़ी बड़ी संख्या काम कर रही है। भारतीय ग्रामों में स्त्रियाँ प्रायः कुछ-न-कुछ उत्पादक कार्य पहले ही से किया

करती हैं। वे अपने पतियों के कार्य में सदा से सहायता देती आई हैं। किसान स्त्रियाँ पहले के समान अब भी खेतों में निलाई, रखवाली आदि का काम कर रही हैं। जुलाहों की स्त्रियाँ बुनने के काम में अपने पतियों की सहायता करती हैं, इसी तरह अन्य स्त्रियां भी कुछ-न-कुछ उत्पादक कार्य किया करती हैं। इनके अतिरिक्त आजकल करीब ४ लाख स्त्रियां भारतवर्ष के विभिन्न कल-कारखानों में बाक़ायदा मेहनत-मज़दूरी करके आजीविका उपार्जन कर रही हैं।

अन्य पेशे—धीरे धीरे शिक्षिता स्त्रियाँ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पदार्पण करती जा रही हैं। स्त्रियाँ वकील और बैरिस्टर बन कर क़ानून की प्रैक्टिस भी करने लगी हैं। कुछ महिलाएँ मजिस्ट्रेट के पद पर भी नियुक्त हो गई हैं। स्कूलों और कालेजों में बहुत-सी स्त्रियाँ शिक्षा का काम कर रही हैं। व्यापार व्यवसाय में भी दूकानों पर जाकर माल बेचने के रूप में अनेक भारतीय स्त्रियों ने प्रवेश किया है।

सामाजिक स्थिति—स्त्रियों की इस चहुँमुखी जागृति का एक परिणाम यह हुआ है कि समाज में उनकी प्रतिष्ठा पहले की अपेक्षा बहुत बढ़ गई है। अब बहुविवाह को बहुत बुरा माना जाने लगा है और इस देश के राजा-महाराजाओं के अतिरिक्त अन्य लोगों में बहुविवाह की प्रथा बहुत कम हो गई है। स्त्रियों को शिक्षा भी दी जाने लगी है और उन्हें सामाजिक कार्यों में भाग लेने की स्वाधीनता भी दी जा रही है। परिणाम यह हुआ है कि अनेक स्त्रियाँ भारतवर्ष

के सामाजिक और राजनीतिक जीवन में बहुत आगे बढ़ गई हैं। श्रीमती सरोजनी नायडू कांग्रेस की सभापति तक बन चुकी हैं। श्रीमती बेगम शाहनवाज़, श्रीमती डा० रेडी और श्रीमती सरोजनी नायडू भारतवर्ष की महिलाओं के प्रतिनिधि-रूप से लण्डन की राउण्ड-टेबल कान्फ्रेन्स में भी शामिल हुई थीं। इनके अतिरिक्त अन्य भी अनेक स्त्रियाँ सार्वजनिक जीवन में बहुत बड़ा भाग ले रही हैं। श्रीमती कमला चट्टोपाध्याय इस देश में साम्यवाद के आन्दोलन के प्रमुख संचालकों में से हैं। लेजिस्लेटिव असेम्बलियों के निर्वाचनों में भारतवर्ष की शिक्षिता स्त्रियों ने खूब दिलचस्पी ली।

स्त्री-सहायक-संस्थाएँ—दुखिया स्त्रियों को सहायता देने के लिए जगह-जगह अनेक संस्थाओं की स्थापना की गई है। देश में सैकड़ों महिला-आश्रम तथा विधवा-आश्रम इस समय तक क़ायम हो चुके हैं। विधवा-विवाह के लिए संगठित रूप से प्रयत्न किया जा रहा है। इस सम्बन्ध में बंगाल के स्वर्गीय ईश्वरचन्द्र विद्यासागर और पंजाब के स्वर्गीय सर गंगाराम का प्रयत्न विशेषरूप से प्रशंसनीय है।

भारतीय परिस्थितियाँ—संसार का महिला-जागृति-आन्दोलन जिस ढंग पर चल रहा है, उसका प्रभाव भारतवर्ष पर पड़ना स्वाभाविक ही था। परन्तु यह एक तथ्य है कि इस देश की सस्कृति और सभ्यता की रक्षा करने की दृष्टि से भारतवर्ष का महिला-जागृति आन्दोलन विदेशी

महिला-आन्दोलनों का पूर्ण अनुकरण नहीं कर सकता। वह अपने ही ढंग से विकसित होगा। कम-से-कम उसे अपने ही ढंग से विकसित करने का प्रयत्न अवश्य होना चाहिए।

विदेशों की स्थिति—पश्चिम के देशों में स्त्रियाँ प्रत्येक दृष्टि से पुरुषों का मुक़ाबला करने का प्रयत्न कर रही है। केवल दिमागी कामों में ही नहीं, अपितु शारीरिक कार्यों में भी वह पुरुषों की प्रतियोगिता कर रही है। स्त्रियाँ आज हवाई-जहाज़ चला रही है, इस दिशा में श्रीमती एमी मौलीसन का नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय है। जिन स्त्रियों को किसी ज़माने में अबला समझा जाता था, उन्होंने इंग्लिश च्यानेल को तैर कर पार कर लिया है। अन्य भी अनेक दुस्सह कार्य पश्चिम की स्त्रियों ने किये है। वहाँ स्त्रियाँ अब हाकी और फुटबाल भी खेलने लगी है और टैनिस में तो वह पुरुषों का बखूबी मुक़ाबला कर लेती है। अमेरिका में स्त्री-डकतों का भी जन्म हो गया है। गुप्तचरी तथा षड्यन्त्र रचने के कार्य में सुप्रसिद्ध षड्यन्त्रकारिणी माताहारी का मुक़ाबला कोई पुरुष भी शायद ही कर सके। मनुष्य-जीवन का कोई भी ऐसा पहलू बाक़ी नहीं रहा, जिसमें पश्चिम की स्त्रियाँ पुरुषों का मुक़ाबला करने को प्रयत्न न कर रही हों।

दुष्परिणाम—स्त्री और पुरुष में परस्पर प्रतिद्वन्द्विता हो जाने से जहाँ महिला-सुधार-आन्दोलन को बड़ी सहायता मिली है, वहाँ उससे दुष्परिणाम भी कम नहीं निकले।

यह एक तथ्य है कि पश्चिम की बहुत-सी अधिक पढ़ी-लिखी लड़कियाँ अब विवाह से घृणा करने लगी हैं। वहाँ पुरुष और स्त्री को परस्पर एक दूसरे पर उतना विश्वास बाकी नहीं रहा। इससे वहाँ का पारिवारिक जीवन यथेष्ठ सुखी और शान्त नहीं रहा। तलाकों की संख्या बहुत बढ़ गई है। पति-पत्नियों के पारस्परिक मुकदमों की संख्या बहुत बढ़ गई है। वहाँ की स्त्रियाँ सन्तान-पालन को अब अपना भूषण नहीं समझती। इन बातों से पारिवारिक जीवन की शान्ति और व्यवस्था में भारी आघात पहुँचा है और विवाह की संस्था भी शिथिल पडती जा रही है।

इस प्रतिद्वन्दिता का एक परिणाम बेकारी बढ़ जाने के रूप में भी हुआ है। स्त्रियाँ भी अब उद्योग-धन्धों में सम्मिलित होने लगी हैं, इससे पुरुषों की बेकारी की समस्या और भी अधिक पेचीदी हो गई है। इसी कारण से जर्मनी आदि देशों में इस बात का गम्भीर प्रयत्न किया जा रहा है कि स्त्रियाँ घरेलू मामलों और पारिवारिक जीवन में ही अधिक दिलचस्पी लें। वहाँ विवाहों की संख्या बढ़ाने की कोशिश भी जारी है। जर्मनी के वर्तमान डिक्टेटर हर हिटलर ने एक साथ हज़ारों स्त्री-पुरुषों के विवाह अपने सामने करवाए हैं।

भारतीय आदर्श—इसमें सन्देह नहीं कि भारतवर्ष में अब तक स्त्रियों की जो स्थिति रही है, वह बहुत ही अवांछनीय और अवनत थी। इसमें भी सन्देह नहीं कि प्राचीन काल से भारत की स्त्रियाँ सामाजिक तथा राज-

नीतिक जीवन में भाग लेती रही हैं। वीरता की दृष्टि से महारानी लक्ष्मीबाई के समान वीर और साहसी व्यक्ति संसार के सम्पूर्ण इतिहास में बहुत कम मिलेंगे। परन्तु इसमें भी सन्देह नहीं कि भारतवर्ष के सम्पूर्ण इतिहास में स्त्री का वास्तविक स्थान घर के अन्दर ही माना जाता रहा है। जिस स्त्री में पुरुष के कुछ गुण आसाधारण तौर पर विकसित होजायँ, उन्हें सामाजिक जीवन में भाग लेने और उनके गुणों से देश को लाभ पहुँचाने मे भारतीय आदर्श रुकावट नहीं डालते। ऐसी स्त्रियो को वे पूरी स्वाधीनता देते है और उन्हें आदर और श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। परन्तु यह भी स्पष्ट है कि भारतीय आदर्शों के अनुसार, सर्वसाधारण स्त्रियो की महत्वाकांक्षा घर की साम्राज्ञी बन कर रहना ही है। समाज की शान्ति और व्यवस्था के लिए पुरुष और स्त्री ने, अपनी शारीरिक रचना और प्राकृतिक भेदों को ध्यान में रख कर, परस्पर यह कार्य-विभाग कर लिया है कि पुरुष तो दुनिया के कठोर काम-काज करे, कमा कर लाए और स्त्री घर की व्यवस्था रक्खे और अपने स्वाभाविक प्रेम और माधुर्य से पुरुष के जीवन को सुखपूर्ण और प्रसन्नतामय बना दे। भारतीय आदर्श स्त्री और पुरुष को एक दूसरे का प्रतिद्वन्द्वी नहीं मानते। वे उन्हें एक दूसरे का 'पूरक' मानते है। स्त्री में जो गुण हैं, वे पुरुष में कम हैं और पुरुष में जो शक्तियाँ है, वे स्त्री में कम है। भारतीय आदर्शों के अनुसार स्त्री और पुरुष को अपने-अपने विशेष गुणों का इतना विकास करना

चाहिये, जिससे दोनों मिल कर एक दूसरे के सहयोग से मनुष्य-समाज के लिये अधिकतम उपयोगी बन सकें।

यह ठीक है कि स्त्रियों से किसी तरह के आदर्शों पर चलने की आशा करते हुए पुरुषों को अपना जीवन भी उन आदर्शों के अनुकूल बनाना चाहिये। विज्ञान और स्वाधीनता के इस युग में यह असम्भव है कि पुरुष स्वयं तो निरंकुशता का जीवन व्यतीत करना चाहें और स्त्री से आदर्श बन कर रहने की आशा करें।

———————

(५)

विज्ञान और साहित्य

विज्ञान

प्राचीन यूनानी इतिवृत्त (माइथौलोजी) की एक कथा है, कि बहुत पुराने ज़माने में डाइडेलस नाम का एक बड़ा भारी वैज्ञानिक हुआ था। यह डाइडेलस इतना अक्लमन्द था कि परमात्मा की बड़ी-बड़ी ताकतों को वह अपने सामने कुछ भी न समझता था। जिस तरह हमारे देश में रावण के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है कि अग्नि, वायु, जल आदि परमात्मा के देवता उसकी सेवा किया करते थे, उसी तरह डाइडेलस भी प्रकृति की शक्तियों पर शासन किया करता था। इस डाइडेलस ने एक हवाई जहाज़ बनाया हुआ था और उस पर सवार होकर वह संसार-भर की सैर किया करता था।

संसार-भर पर डाइडेलस का रोब स्थापित हो गया। दुनिया के लोगों के लिए यह अचरज की बात थी कि

डाइडेलस का जहाज़ उडता किस तरह है और वह किसी को अपनी मशीन का भेद बताने को तैयार नहीं था।

एक दिन डाइडेलस की अनुपस्थिति में उसके पुत्र आइकेरस के जी में यह इच्छा पैदा हुई कि वह भी अपने पिता के हवाई जहाज़ की सैर करे। चुपके से वह उस जगह गया, जहाँ वह जहाज रक्खा हुआ था। आइकेरस इस जहाज़ में बैठ गया और उसने बटन दबा दिया। जहाज़ एकदम से आस्मान म उड़ गया। दूर से डाइडेलस ने देखा कि उसका जहाज़ आस्मान में उड़ा जा रहा है। उसकी हैरानी और क्रोध का ठिकाना न रहा। वह तेज़ी से भाग कर घर पहुँचा तो देखा कि उसका पुत्र ही हवाई जहाज़ उड़ा कर ले गया है। अब डाइडेलस के हृदय में क्रोध का स्थान चिन्ता ने ले लिया।

बात यह थी कि डाइडेलस अपने पुत्र को बहुत चाहता था, और यह ध्यान करके उसे बड़ा भय प्रतीत हुआ कि आइकेरस को जहाज़ नीचे उतारने का ढंग मालूम नहीं है। डाइडेलस को मालूम ही था कि उसके जहाज़ को उड़ाना जितना आसान है, उसे वापस लाना उतना ही कठिन है। निराश भाव से पिता आस्मान की ओर देखता रह कर पुत्र की चिन्ता करने लगा, मगर उसकी चिन्ता कोई फल नहीं लाई। आइकेरस उड़ता चला गया। वह ऊपर-ऊपर उड़ता चला गया और अन्त में किसी सितारे से टकराकर उसका जहाज़ चकनाचूर हो गया और तब आइकेरस की हड्डी-पसली का भी पता न चला।

विज्ञान का प्रभाव—यूनानी इतिवृत्त की यह कहानी बड़ी अर्थपूर्ण है। विशेषकर आजकल के ज़माने में, जब विज्ञान दिन-ब-दिन उन्नति कर रहा है, यह कहानी और भी अधिक अर्थपूर्ण हो उठी है। आज का मनुष्य सच्चे अर्थों में डाइडेलस बन गया है। उसने प्रकृति की सम्पूर्ण शक्तियों पर विजय प्राप्त कर ली है। प्राचीन युग में मनुष्य के मस्तिष्क ने जिन सुखों की कल्पना-मात्र ही की थी, वे सब आज विज्ञान की सहायता से उपलब्ध किए जा सकते हैं। रोज़ नए-नए आविष्कार पुरुष का मस्तिष्क कर रहा है। और इन आविष्कारों से मनुष्य की शक्ति सैकड़ों-हज़ारों गुना बढ़ गई है।

भय के कारण—परन्तु भय इस बात का है कि आइकेरस की तरह आज का मनुष्य इन महान वैज्ञानिक आविष्कारों से कहीं स्वयं ही अपनी समाप्ति न कर ले। विज्ञान की शक्ति निस्सन्देह बहुत बड़ी है, परन्तु यह शक्ति जहाँ मनुष्य के जीवन को बहुत सुखी बना सकती है, वहाँ यह उसे इसी अनुपात में कष्ट भी पहुँचा सकती है। और आज हम देख रहे हैं कि वैज्ञालिक आविष्कारों के कारण जहाँ एक मनुष्य हवाई जहाज़ पर बैठकर २४ घण्टों के भीतर ही इँग्लैण्ड से हिन्दोस्तान पहुँच सकता है, (यह रिकार्ड करीब २२ घण्टे का है) वहाँ इन्हीं आविष्कारों की सहायता से आज हज़ारों लाखों मनुष्यों की हत्या भी की जा सकती है। अब विषैले गैसों के जो बम बन गए हैं, उनकी सहायता से एक छोटा-सा हवाई जहाज़

१५ मिनट के अन्दर लाहौर शहर में बसनेवाले ५ लाख मनुष्यों की हत्या कर सकता है। जहाँ मनुष्य को अपनी कृतियों पर अभिमान होना चाहिए, वहाँ उसमें यह समझ भी होनी चाहिए कि कहीं वह अपने पैरों पर आप ही कुल्हाड़ा न मार बैठे। संसार के विचारकों को इस बात का भय प्रतीत होने लगा है कि कहीं आगामी महायुद्ध में वर्तमान सभ्यता अपनी मौत आप ही न मर जाय। मानव-समाज के नेताओं का यह कर्तव्य है कि वे ऐसी परिस्थितियों को न आने दें।

कुछ पुराने आविष्कार—बिजली, भाप आदि की शक्तियां आज के जीवन का बहुत ही महत्वपूर्ण भाग बन गई हैं। हम लोगों के लिए एक भी दिन इन शक्तियों की सहायता के बिना काटना कठिन हो गया है। आज घर-घर में बिजली है। रेल, तार, मोटर, मशीन आदि का उपयोग आज सारी दुनिया के बहुत ही पिछड़े हुए भागों में भी होता है। भाफ़ की रेलगाड़ी की अपेक्षा बिजली की रेलगाड़ियाँ अधिक तेज़ चलती हैं, इससे संसार के अनेक भागों में बिजली की रेलें चलने लगी हैं। इस देश में भी कुछ स्थानों पर बिजली की रेलगाड़ियों का प्रचार हो गया है। बड़े बड़े शहरों में बिजली की ट्रामगाड़ियाँ भी चलती हैं। भारतवर्ष के पहाड़ों में झरनों और नदियों की कमी नहीं है, उन्हें बाँध कर अनेक जगह उनके प्रपात बनाए गए हैं, और उनसे बिजली निकाली गई है। पंजाब में भी योगेन्द्र-नगर में इस तरह का प्लाण्ट लगाया गया है और उससे

इस प्रान्त के अनेक ज़िलों के कस्बों-कस्बों तक बिजली पहुँचाई जा रही है। यहाँ इन प्राचीन हो गए आविष्कारों के सम्बन्ध में कुछ न कह कर, हम कतिपय नवीन आविष्कारों का वर्णन करेंगे—

टैलीवीयन

टैलीवीयन की कल्पना—टैलीफ़ोन के आविष्कार के बाद लोग यों ही मज़ा लेने के लिए कल्पना किया करते थे कि कितना अच्छा होता, यदि हम टैलीफ़ोन से बातचीत करने के साथ-साथ दूर की किसी घटना का फोटो भी ले सकते। वह कल्पना आज सच्ची हो गई है और टैलीवीयन के द्वारा एक घटना का फ़ोटो हज़ारों मील की दूरी पर भेज सकना सम्भव हो गया है। इन दो वर्षों में इस सम्बन्ध में जो परीक्षण हुए हैं, वे काफी सफल हुए हैं और आस्ट्रेलिया से अनेक चित्र टैलीवीयन द्वारा इँग्लैण्ड भेजे गए हैं। इन दोनों देशों में लगभग १२००० मील का अन्तर है। अर्थात् एक देश पृथ्वी के इस छोर पर है, तो दूसरा उस छोर पर।

टैलीवीयन का आविष्कार कैसे हुआ—बीसवीं सदी के शुरू में निपको नाम के एक जर्मन वैज्ञानिक ने एक पुर्ज़ा बनाया था, जो आजकल टैलीवीयन में काम में लाया जाता है। परन्तु यह अकेला पुर्ज़ा मतलब पूरा न कर सकता था। युद्ध से पूर्व लो नाम के एक अँगरेज़ वैज्ञानिक ने टैलीवीयन के सिद्धान्त की सम्भावना परीक्षा के रूप में दिखाई थी। परन्तु वास्तव में टैलीवीयन कोई एक आविष्कार

नहीं; वह करीब पचास विभिन्न आविष्कारों के आधार पर बन पाया है।

टैलीवीयन इस सिद्धांत पर बना है—किसी दृश्य के छाया और प्रकाश को बिजली के विभिन्न दर्जों में परिणत कर लिया जाता है और तब उसे तार द्वारा अथवा बेतार की तार से वायु-मण्डल में फैला दिया जाता है बिजली के इन विभिन्न दर्जों को रिसीवर द्वारा पकड़ा जाता है और तब फ़ोटो के सिद्धान्तों पर उसका नैगेटिव तैयार कर लिया जा सकता है। फोटोग्राफी में कुछ मसाले ऐसे इस्तेमाल किए जाते हैं, जिन पर प्रकाश और छाया की छाप साफ़तौर से पड़ सकती है। इन मसालों पर किसी वस्तु का प्रतिबिम्ब डाल कर, उन्हें कतिपय अन्य मसालों द्वारा पक्का कर लिया जाता है और तब उससे फोटो का नैगेटिव तैयार हो जाता है। टैलीवीयन में प्रकाश और छाया के चित्रों को बिजली और बेतार के तार की मदद से संसार के एक कोने से दूसरे कोने तक भेजा जा सकता है। इसी सिद्धान्त के आधार पर टैलीवीयन तैयार किया गया है।

अभी प्रारम्भिक दशा में—टैलीवीयन अभी प्रारम्भिक दशा में है। इस समय तक उसके द्वारा जो चित्र लिये जाते हैं, वे कैमरे के अच्छे चित्रों के समान स्पष्ट नहीं होते। यद्यपि उसके द्वारा चित्रित वस्तु का ठीक ठीक अन्दाज़ा अवश्य लिया जा सकता है। परन्तु उम्मीद है कि शीघ्र ही टैलीवीयन इतनी उन्नति कर जायगा कि उसके द्वारा

न केवल संसार-भर की घटनाओं के अच्छे-अच्छे फ़ोटो अनायास ही, उसी क्षण लिए जा सकेंगे; अपितु आशा की जाती है कि एक दिन, उसकी मदद से लाहौर में बैठा हुआ एक व्यक्ति इंग्लैण्ड की पार्लियामैण्ट के दृश्य को उतनी ही अच्छी तरह देख सकेगा, जिस तरह आज वह रेडियो की मदद से वहाँ पर दिए जा रहे भाषणों को, यदि वे ब्रौडकास्ट किए जा रहे हों तो, सुन सकता है।

रेडियो

रेडियो का प्रचार—वर्तमान संसार में रेडियो ज्ञान के विस्तार का एक बहुत ही श्रेष्ठ साधन माना जाने लगा है और इसी कारण उसकी महत्ता बहुत अधिक बढ़ गई है। अमेरिका में प्रायः प्रत्येक घर में रेडियो लगा हुआ है। वहाँ क़रीब १½ करोड़ रेडियो इस्तेमाल में लाये जाते हैं। संसार के अन्य देशों में भी रेडियो बहुत लोक-प्रिय हो रहा है। भारतवर्ष में रेडियो को प्रचलित करने का प्रयत्न कुछ ही समय से शुरू हुआ है और भारत-सरकार इस कार्य के लिए काफ़ी धन व्यय कर रही है। दिल्ली, कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, लाहौर, लखनऊ आदि में अनेक शक्तिशाली ब्रौडकास्टिंग स्टेशन बनाये गए हैं।

रेडियो के सिद्धान्त—आकाश में ईथर नाम का जो तत्व है, वह भी एक बहुत ही श्रेष्ठ माध्यम (मीडियम) का काम देता है। इस ईथर को प्राचीन भारतीय दार्शनिक 'आकाश' कहते थे और उसे भी वे एक तत्व मानते थे। सामान्य ढंग से हम लोग जो आवाज़ सुनते हैं, वह वायुमण्डल की

लहरों के कम्पनों द्वारा हमारे कानों में पहुँचती है; अर्थात् आवाज़ को हमारे कानों तक पहुँचाने के लिए वायु माध्यम (मीडियम) का काम करती है। नवीन वैज्ञानिकों ने जब ईथर की खोज की और यह जान लिया कि वह भी एक बहुत श्रेष्ठ वाहक और माध्यम है, तो इस बात के प्रयत्न शुरू किये कि शब्द आदि को उसी के द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जा सके। इसी आधार पर रेडियो का आविष्कार हुआ। ब्रौडकास्टिंग स्टेशन पर एक गायक एक गीत गाता है। यह गीत एक ऐसे यन्त्र के सन्मुख गाया जाता है, जो यन्त्र शब्द की लहरों को बिजली की सहायता से ऐसे कम्पनों के रूप मे परिवर्तित कर देता है, जो ईथर पर प्रभाव करते हैं और परिणामतः ये कम्पन सम्पूर्ण आकाश-मण्डल में व्याप्त हो जाते हैं। जितना शक्तिशाली ब्रौडकास्टिंग स्टेशन होता है, उतना ही अधिक दूरी तक ये कम्पन प्रभाव उत्पन्न करते हैं। रेडियो के रिसीवरों में, बिजली की सहायता से यह शक्ति होती है कि वे ईथर द्वारा प्रसारित किये जा रहे उन कम्पनों को पकड़ सकें और उसके द्वारा वायु मे ध्वनि के कम्पन पैदा कर सकें और तब उसे सुना जा सकता है।

रेडियो की महत्ता—संसार की वर्तमान राजनीति, व्यापार, शिक्षा आदि में नवीनतम प्रगतियों और समाचारों से परिचित रहने की बड़ी महत्ता है। किसी ज़माने में संसार के एक देश का समाचार पाँच-चार हज़ार मील की दूरी पर पहुँचाना लगभग असम्भव बात थी। विदेशों के

बड़े बड़े समाचार महीनों के बाद काफ़ी बिगड़े हुए रूप में सुनने में आया करते थे। उसके बाद संगठित डाक व्यवस्था ने उस दशा में परिवर्तन कर दिया। जब तार का आविष्कार हुआ तो समाचार जानना बहुत सुगम हो गया। परन्तु तार में भी अनेक झंझट थे। तारों का जाल बिछाना और उस पर भी संकेतों से बातचीत समझना। यह सब झंझट ही तो था। अब रेडियो के आविष्कार से एक समाचार उसी समय संसार-भर में क़रीब क़रीब एक साथ ही सुन लिया जा सकता है। व्यापारिक समाचार और राजनीतिक घटनाएँ आदि रेडियो की सहायता से उसी समय जान ली जा सकती हैं। इनके अतिरिक्त एक अच्छे संगीतज्ञ अथवा अच्छे व्याख्याता की शक्तियों से अब मानव-जाति का बहुत बड़ा भाग अनायास ही लाभ उठा सकता है। रेडियो, प्रचार का बहुत श्रेष्ठ साधन है और यही कारण है कि सभी देशों की सरकार उस पर कुछ-न-कुछ प्रतिबन्ध ज़रूर लगाती हैं।

रेडियो के नए-नए परीक्षण—हाल ही में रेडियो की सहायता से संगीत में कुछ परिवर्तन करने का प्रयत्न किया जा रहा है। थरमीन, ट्रेमोनियम आदि कतिपय ऐसे यन्त्र ईजाद किए जा रहे हैं, जो बिलकुल नए ढंग से ब्रोडकास्टिंग स्टेशनों पर बजेंगे और उनकी आवाज रेडियो द्वारा बहुत ही चित्ताकर्षक प्रतीत हुआ करेगी और यदि कभी रेडियो और टैलीवीयन दोनों ही आविष्कार अपनी पूर्णता को पहुँच गए, तब तो दूरी का भेद कुछ प्रतीत ही न हुआ करेगा।

बोलते फिल्म

बोलते फिल्मों का प्रचार—वर्तमान विज्ञान का कोई अन्य आविष्कार सम्भवतः इतना लोकप्रिय सिद्ध न हुआ होगा, जितना बोलते फिल्मों का आविष्कार हुआ है। सन् १९२६ में पहले-पहल बोलती फिल्में सफलता-पूर्वक तैयार हो सकी थीं। तब से लेकर अब तक, केवल १० वर्षों में ही, इन बोलती फ़िल्मों ने न केवल चुप फ़िल्मों को ही समाप्त कर दिया है, अपितु नाटकों की भी इतिश्री कर दी है। संसार भर के देशों में सिनेमा अब बहुत ही लोकप्रिय वस्तु बन गई है और आए दिन बीसियों नए नए चित्र बनते रहते हैं। बोलते फिल्मों की इतनी माँग है कि इस क्षेत्र में काम करने वाले नट और नटियों को आज संसार भर में सब से अधिक वेतन मिलता है। अमेरिका की कतिपय लोक-प्रिय नटियों को ५,००० रुपया दैनिक तक वेतन मिलता है।

फिल्मों का सिद्धान्त—फ़िल्म उसी चीज़ से बनती है, जिससे फोटो उतारे जाते हैं। वह सिलोलाइड की क़रीब दो इंच चौड़ी और सैकड़ों फ़ीट लम्बी पट्टी होती है, जिस पर फोटो लेने के मसाले लगे होते हैं। उस पर एक ही दृश्य के पृथक् पृथक् चित्र इतनी तेज़ी से खींचे जाते हैं कि एक सेकण्ड में २२ चित्र पृथक् पृथक् परन्तु साथ-साथ लगे हुए खिंच जायँ। इस नैगेटिव को बिजली की रोशनी के सामने चलाया जाता है। चलाने की गति इतनी रक्खी जाती है कि एक सेकण्ड में २० चित्र प्रकाश के सामने आ जायँ। इन विभिन्न चित्रों का प्रतिबिम्ब परदे पर पड़ता जाता है

और देखने वाले को प्रतीत होता है कि वह एक ही सम्बद्ध चीज़ देख रहा है, जिसके पात्रों में गति है।

फ़िल्म कैसे बोलते हैं—उपर्युक्त नैगेटिव फ़िल्मों के किनारे पर माइक्रोफोन नामक यन्त्र द्वारा आवाज़ के कम्पनों के चिह्न बनाए जाते हैं। शब्द कम्पनों के ये चिह्न बिजली से सम्बद्ध तार के बहुत ही बारीक गुच्छों को हिलाते हैं और उनके द्वारा वायु-मण्डल में उसी-उसी तरह के कम्पन पैदा होते जाते हैं, जो कम्पन, फ़िल्म पर अंकित होते हैं। इस आवाज़ को यन्त्रों की सहायता से ऊँचा कर दिया जाता है।

कुछ आश्चर्यजनक तथ्य—संसार-भर में क़रीब ६५ हज़ार सिनेमा हाल हैं और उनके लिए प्रतिवर्ष दो अरब फ़ीट कच्ची फिल्म की ज़रूरत होती है और इन दो अरब फ़िट फ़िल्मों पर क़रीब ३१ अरब फोटो प्रतिवर्ष खींचें जाते हैं। अच्छी-अच्छी फ़िल्में तैयार करने के लिए विदेशों की बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ क़रीब एक लाख फ़ीट फिल्म पर फोटो लेती है और तब उनमें से १०, १२ हज़ार फीट को छाँट कर अपने काम लाती हैं। शेष ९० हज़ार फ़ीट फ़िल्म खराब जाती है। अमेरिका में फिल्म की लाइन में जो परीक्षण हो रहे है, उनका अन्दाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि वहाँ के एक फ़िल्म कारखाने में प्रतिवर्ष ३० लाख फीट फिल्म विभिन्न परीक्षणों में ही व्यय कर दी जाती है।

हवाई जहाज़

१८वीं सदी में, जब राइट-बन्धु हवाई जहाज़ बनाने

का प्रयत्न कर रहे थे, तब इंग्लैण्ड के एक बहुत ही प्रतिष्ठित अखबार ने उनकी मज़ाक उडाते हुए लिखा था—"यदि मनुष्य उड़ने के लिए बनाया गया होता, तो अवश्य ही परमात्मा ने उसे पंख दे दिए होते।" परन्तु उसके बाद, बीसवीं सदी के प्रारम्भ में वैज्ञानिकों ने मनुष्य के दिमाग की इस पुरानी कल्पना को व्यवहार में लाकर दिखा दिया कि मनुष्य आस्मान में उड़ सकता है।

हवाई जहाज़ों का प्रथम व्यवहार गत महायुद्ध में किया गया था। तब दोनों पक्षों ने यह अनुभव किया था कि हवाई जहाजों की सहायता से शत्रुपक्ष को बहुत अधिक हानि पहुँचाई जा सकती है, इसीलिए उन दिनों हवाई जहाज़ बनाने में और उनकी त्रुटियों को दूर करने में वैज्ञानिकों ने अपनी सारी शक्ति लगा दी थी। परिणाम यह हुआ कि आज हवाई जहाज़ इतनी उन्नति कर गए हैं।

हवाई जहाज़ों का उपयोग—गत महायुद्ध के बाद आवागमन, डाक तथा व्यापारिक कार्यों के लिए हवाई जहाजों का प्रयोग शुरू हुआ। क्रमशः संसार-भर के सभी सभ्य देशों में नियमितरूप से हवाई जहाजों द्वारा डाक पहुँचाई जाने लगी। आज यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका और एशिया ये पाँचों महाद्वीप हवाई जहाजों की सहायता से एक दूसरे के बहुत निकट ले आए गए हैं। उन्नीसवीं सदी में एक लेखक ने यह कल्पना की थी कि यदि एक मनुष्य को तब तक की तेज़-से-तेज सवारी लगातार मिलती चली जाय, तो वह मनुष्य ८० दिनों में सम्पूर्ण

संसार की प्रदक्षिणा कर सकता है। ८० दिनों का यह काल तब बहुत ही छोटा समझा गया था, परन्तु आज हवाई जहाज़ों की सहायता से यदि तेज़-से-तेज़ हवाई जहाज़ (बदलने की आवश्यकता पड़ने पर) मिलते चले जायँ, तो एक मनुष्य ४ और ५ दिनों के बीच में सम्पूर्ण ससार की प्रदक्षिणा कर सकता है। सामुद्रिक जहाज़ द्वारा अभी तक एक यात्री १५ दिनों में बम्बई से लण्डन पहुँचता है, अब हवाई जहाज़ की मदद से यह यात्रा ५ दिनों में समाप्त कर ली जाती है और अब बाक़ायदा हवाई जहाज़ों की सर्विस भी शुरू हो गई है। वैज्ञानिक दृष्टि से अधिक उन्नत देशों ने हवाई जहाज़ों को और भी अधिक अपनाया है। वहाँ हवाई जहाज़ों का प्रभाव रेल-गाड़ियों की आमदनी पर भी पड़ने लगा है। जापान में तो हवाई जहाज़ों की यात्रा बहुत ही सस्ती है।

ख़तरे—हवाई जहाज़ों का चलन एक साधारण बात हो जाने पर भी, उनमें यात्रा करना अभी तक ख़तरे से खाली नहीं समझा जाता। इसका मुख्य कारण यह है कि हवाई जहाज़ों में अभी तक अनेक सुधारों की गुंजाइश है। रेलगाड़ी में अधिक शक्तिशाली एंजन लगाकर हम साधारण स्थिति की अपेक्षा अनेक गुना अधिक बोझ आसानी से खिंचवा सकते हैं, परन्तु हवाई जहाज़ों के सम्बन्ध में यह बात नहीं। साथ ही हवाई जहाज़ों पर वायु-मण्डल की दशा का सीधा प्रभाव पड़ता है। अभी तक अधिक बड़े हवाई जहाज़ बनाना और उनका चलाना

एक ख़तरे का काम समझा जाता है। बीसवीं सदी की तीसरी दशाब्दि के अन्त में इँग्लैण्ड ने 'आर १०१' नाम का जो एक विशालकाय हवाई जहाज़ बनाया था, उस ढंग का उससे बड़ा हवाई जहाज़ संसार के किसी देश ने अभी तक नहीं बनाया। यह 'आर १०१' अपने बोझ और अपनी विशालता के कारण ही अपनी पहली यात्रा में नष्ट-भ्रष्ट हो गया था और उसके अन्दर बैठे हुए १०० के क़रीब यात्री, जिनमें इँग्लैण्ड के अनेक प्रमुख राजनीतिज्ञ और वैज्ञानिक भी थे, बेमौत मारे गए थे।

ज़ैप्पेलिन (Zeppeline) का आविष्कार—उपर्युक्त दुर्घटना से ससार के सभी देशों ने यह शिक्षा ली कि हमें अभी बहुत बड़े हवाई जहाज़ न बना कर मामूली आकार के प्रचलित जहाज़ों में ही वे सुधार करने का प्रयत्न जारी रखना चाहिए, जिनसे उनपर वायुमण्डल की परिस्थितियों का प्रभाव न पड़े और उन्हें ख़तरे के बिना चलाया जा सके। फलतः इस सम्बन्ध में अनेक उपयोगी आविष्कार किए भी गए हैं। परन्तु जर्मनी के लोग बड़े आकार के हवाई जहाज़ों के बहुत शौकीन थे। उन्होंने एक नई दिशा में अपना प्रयत्न जारी रक्खा। काउण्ट ज़ैप्पेलिन नाम का एक महान वैज्ञानिक गैसवाले बेलून का हवाई जहाज़ बनाने में बरसों से लगा हुआ था। अन्त में वह उस ढंग के बड़े-बड़े हवाई जहाज़ बनाने में सफल हुआ। इस हवाई जहाज़ को अब ज़ैप्पेलिन कहा जाता है। सन् १९२८ में ग्राफ ज़ैप्पेलिन नाम का एक विशालकाय जहाज़ जर्मनी

में बना और वह सफलता-पूर्वक कार्य करता रहा। उसके बाद तो बहुत ही बड़े-बड़े ज़ैप्पेलिन बनाए गए। 'एल० ज़ैड० १२९' की लम्बाई ८१२ फ़ीट थी और उसकी चाल ८० मील प्रति घण्टा। जर्मनी ने 'हिण्डनवर्ग' नाम का एक विशालकाय ज़ैप्पेलिन तैयार किया, जो क़रीब १००० फीट लम्बा। इससे बड़ा ज़ैप्पेलिन संसार में आज तक कभी नहीं बना था, परन्तु यह जहाज़ भी गिर कर नष्ट हो गया।

ज़ैप्पेलिन का सिद्धान्त—ज़ैप्पेलिन पर सैकड़ों फ़ीट लम्बा और लाखों वर्ग फ़ीट क्षेत्रफल का एक बैलून लगा होता है, जिस में हाइड्रोजन भर दी जाती है। यह गैस वायु से हलकी है, अत: ज़ैप्पेलिन को आस्मान में रहने में कोई दिक़्क़त नहीं होती। उसे एंजिन की सहायता से उतारा जाता है और यन्त्रों की सहायता से उसके मार्ग पर नियन्त्रण रक्खा जाता है। ज़ैप्पेलिन को 'वायु से हलका जहाज़' भी कहा जाता है।

एरोप्लेन तथा ज़ैप्पेलिन में भेद—एरोप्लेन (सामान्य हवाई जहाज़) यन्त्रों की सहायता से आस्मान में चढ़ता है और पंखों की सहायता से समतुलित किया जाता है। अतः उसे बहुत बड़े आकार का बनाने में वजन के बहुत बढ़ जाने का भय रहता है। परन्तु बहुत बड़े आकार का न बन सकने पर भी एरोप्लेन की चाल बहुत तेज़ रहती है। एरोप्लेन के लिए घण्टे में २५० मील चल लेना एक मामूली बात है। दूसरी ओर गैस की मात्रा बढ़ा कर ज़ैप्पेलिन को चाहे कितना बड़ा क्यों न बना लिया जाय, उसकी रफ्तार बहुत तेज़

नहीं की जा सकती। इसलिए इस शीघ्रता के अभाव में ज़ैप्पेलिन का बहुत आदर नहीं हो सका। ज़ैप्पेलिन के लिए हेलियम नाम की एक हलकी गैस सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि वह हाइड्रोजन की तरह जल उठनेवाली नहीं। परन्तु हेलियम पैदा करनेवाली चीज़ों पर अमेरिका का एकाधिकार है, अतः हेलियम का इस्तेमाल अभी तक जारी नहीं हो सका।

सीप्लेन—ऐसा जहाज़ जो पानी पर तैर सके और आस्मान में भी उड़ सके, सीप्लेन कहलाता है। गत महायुद्ध में ऐसे जहाज़ खूब काम आए थे। परन्तु ऐसा जहाज़ बहुत छोटे आकार का बनता है।

हवाई जहाजों में अन्य सुधार—हवाई जहाज़ इस समय तक कोण बना कर चढ़ना शुरू करते हैं और आस्मान में चक्कर लगा कर चढ़ते हैं। अब प्रयत्न किया जा रहा है कि ऐसे साधन निकाले जायँ, जिनसे हवाई जहाज़ को आस्मान में सीधा चढ़ाया जा सके और सीधा ही उतारा जा सके। हवाई जहाज़ों को समुद्र में उतारने के लिए अनेक जगह अब तैरते हुए प्लेटफ़ार्म भी बनाये जा रहे हैं।

रौकेट-शिप

यह एक आश्चर्य की बात है कि अनेक बार आज का खिलौना कल का एक महान वैज्ञानिक आविष्कार सिद्ध हो जाता है। आज के सामुद्रिक जहाजों की दिशा, मार्ग आदि बताने वाला सब से अधिक महत्वपूर्ण यन्त्र

गाइरोस्कोप (गाइरो कौम्पस) संसार भर में बहुत ही लोकप्रिय सिनेमा और व्यापारिक जगत् का अत्यधिक महत्वपूर्ण यन्त्र टैलीफोन—ये सब आविष्कार शुरू-शुरू में बच्चों के खेलने के काम आते थे। उसी तरह खेल की एक और चीज़ से वर्तमान वैज्ञानिक एक बहुत बड़ा आविष्कार करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

आतिशबाजी के आधार पर रौकेट-शिप—और यह सम्भावित महान् आविष्कार आतिशबाज़ी की दुर्दमनीय ताक़त के आधार पर किया जायगा। जिस तरह आतिश-बाज़ी एक खेल होते हुए भी ख़तरनाक है, उसी तरह उसके सिद्धान्त पर निकाला गया रौकेटशिप भी, प्रतीत होता है कि मानव-समाज के लिए एक दृष्टि से बहुत ख़तरनाक सिद्ध होगा। आपने देखा होगा कि आतिशबाज़ी की अनेक चीज़ों में लकड़ी या बाँस का टुकड़ा भी लगा होता है। जब उस आतिशबाजी को आग लगाई जाती है, तो उसके मसाले में तीव्र विस्फोट होता है। इस विस्फोट में इतनी शक्ति होती है कि बाँस या लकड़ी का वह टुकड़ा एक ही क्षण में वायुमण्डल में सैकड़ों गज़ की दूरी पर जा पहुँचता है। जब विस्फोट समाप्त हो जाता है, तो वह टुकड़ा भी अपने बोझ के कारण पृथ्वी पर गिर पड़ता है।

विस्फोट की शक्ति—विस्फोट में जो शक्ति होती है, वह देर तक रहने वाली नहीं होती, परन्तु वह इतनी तेज़ होती है कि उसकी गति लगभग उल्कापात के समान तेज़ हो जाती है। इसी विस्फोट की तेज़ शक्ति के आधार पर

तोप, बन्दूक और पिस्तौल की गोलियां काम करती हैं और इन्हीं के आधार पर बम भयंकर जन-संहार कर सकते हैं। आजकल के वैज्ञानिक इस महाभयंकर शक्ति को भी मनुष्य का गुलाम बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं।

एक महत्वपूर्ण परीक्षण—वैज्ञानिक कहते है कि यदि एक छोटी-सी आतिशबाज़ी एक छड़ी को आस्मान में उठा ले जा सकती है तो किसी शक्तिशाली विस्फोटक पदार्थ के आधार पर बनाया गया एक बड़ा यन्त्र, जिसे एक बहुत बड़ी आतिशबाजी भी कहा जा सकता है, एक ऐसे कमरे को क्यों नहीं उठा ले जा सकता, जिसमें कुछ मनुष्य भी बैठे हों। कुछ समय हुआ, एक मामूली से सीप्लेन में बहुत-सा भार लादकर उसे समुद्र में छोड़ दिया गया था। इस प्लेन के सामने बड़ी-बड़ी आतिशबाज़ियाँ लगा दी गईं। प्लेन में बोझ इतना अधिक भर दिया गया था कि पानी पर भी उसका ऐंजन उसे कठिनता से खींच सकता था, आस्मान में उड़ने की तो बात ही क्या। जब यह देख लिया गया कि वह सामुद्रिक हवाई जहाज उड नहीं सकता, तब आतिशबाज़ियों में आग दी गई और तभी वह सीप्लेन बड़ी तेज़ी से आकाश में जा पहुँचा।

इस परीक्षण की महत्ता—इस परीक्षण की ओर बहुत कम लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ था, परन्तु वास्तव में इसकी महत्ता बहुत अधिक थी। यह पूरी तरह सम्भव है कि इन परीक्षणों के आधार पर एक समय वह स्थिति आ पहुंचे, जब रौकेट की शक्ति का उपयोग मनुष्य अपने व्यवहार में भी ला सके।

रौकेट-शिप के उपयोग—कल्पना कीजिए कि कभी रौकेट शिप बन गया, तो उस आलिशी जहाज़ में इतनी शक्ति होगी कि उसके द्वारा तीन घण्टों के अन्दर ही अन्दर एक मनुष्य दुनिया के एक स्थान से किसी भी दूसरे स्थान पर पहुँच सकेगा। इंग्लैण्ड से आस्ट्रेलिया पहुँचने में तब २॥ घण्टे का समय लगा करेगा। लाहौर से बम्बई पहुँचना एक मज़ाक सा हो जायगा। सिर्फ १५ मिनटों में लाहौर से बम्बई पहुँचा जा सकेगा। अर्थात् एक विद्यार्थी पौने सात बजे लाहौर से चल कर ७ बजे बम्बई के किसी कालेज में लैक्चर सुनने के लिए पहुँच सकेगा। इस जहाज़ के द्वारा चाँद तथा तारों में पहुँचना भी असम्भव न रहेगा। कोई दिन ऐसा आ सकता है कि इन रौकेट शिपों की सहायता से इस पृथ्वी का मनुष्य चाँद या मंगल आदि तक जा पहुँचे। अमेरिका की 'नेवल एकेडमी' के श्री कौनरॅड का अनुमान है कि २७० मनों का एक रौकेट इस पृथ्वी से चाँद तक पहुँच तो सकता है, परन्तु राह खर्च के लिए इस जहाज़ को १ लाख ६॥ हज़ार मन हाइड्रोजन और आक्सीजन चाहिए।

युद्धों में रौकेटों का उपयोग—रौकेट शिप द्वारा कभी मनुष्य भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच सकेंगे, यह तो अभी दूर की बात प्रतीत होती है, परन्तु यह तो आज भी बहुत आसान और सम्भव प्रतीत हो रहा है कि रौकेटों द्वारा युद्धों में शत्रु-सेना पर आक्रमण किया जा सकेगा। एक विशेष कोण बनाकर, एक विशेष

शक्ति के साथ एक ऐसा रौकेट छोड़ा जायगा, जिसमें कोई मनुष्य तो न बैठा होगा, परन्तु उसमें विषैले बम आदि बड़ी मात्रा में मौजूद होंगे। यह रौकेट उसी जगह गिरेगा, जहाँ के लिए उसे रवाना किया जायगा। अनुमान है कि ये रौकेट ५०० मीलों तक बखूबी मार कर सकेंगे। गत महा-युद्ध में जब जर्मनी की भीमकाय तोपों ने ७५ मील की दूरी से कुछ गोले फ्रान्स की राजधानी पेरिस पर बहुत अधूरे-से रूप में फेंके थे, तब इस बात को एक बहुत ही आश्चर्य-पूर्ण चमत्कार के रूप में लिया गया था। परन्तु अब रौकेटों द्वारा यह बात बहुत ही मामूली हो जायगी। लाहौर से हमला कर के एक ओर काबुल तक, और दूसरी ओर कानपुर तक एक ही साथ भयंकर मार-काट की जा सकेगी। इस तरह इस आविष्कार की महत्ता युद्धों की दृष्टि से बहुत अधिक है और यह पूरी तरह सम्भव है कि रौकेट का आविष्कार वर्तमान युद्ध-विद्या में क्रान्ति पैदा कर दे। आजकल अनेक देशों के सेना-विभागों द्वारा खुफिया तौर पर रौकेट बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। परन्तु यह तो स्पष्ट ही है कि इस तरह के आविष्कार छिपे नहीं रह सकते।

कुछ अन्य आविष्कार—मनुष्य-जीवन से सम्बन्ध रखने वाली प्रत्येक बात के सम्बन्ध में आज नए-नए परीक्षण और आविष्कार किए जा रहे हैं। आज ऐसी मशीनें बन गई हैं, जिनमें एक तरफ गेहूँ, खाँड आदि के रूप में कच्चा माल रख दिया जाता है और दूसरी ओर

डिब्बों में बन्द, सुन्दर सुन्दर लेबलों से सुसज्जित, स्वादिष्ट विस्कुट निकल आते हैं। ऐसे कारखाने भी आज बन गए हैं जिनमें एक ओर वृक्षों के बड़े बड़े तने डाले जाते हैं और दूसरी ओर छपे हुए अखबार तह किए-कराए रूप में बाहर निकल आते हैं। उसी कारखाने में उन वृक्षों का कागज़ बन जाता है, और उसी कारखाने की मशीनों द्वारा वह छपे हुए ताज़े अखबारों के रूप में परिवर्तित हो जाता है। इसी तरह गिनने और हिसाब लगाने वाली मशीन भी आज तैयार हो चुकी हैं। चिकित्सा, चीरफाड आदि के सम्बन्ध में जो आविष्कार हुए हैं, उनकी महत्ता भी बहुत अधिक है। इन आविष्कारों द्वारा मनुष्य बीमारियों और शारीरिक कमज़ोरियों से बचने का सफल प्रयत्न कर रहा है, दूसरी ओर युद्धों के सम्बन्ध जो भयंकर-भयंकर अस्त्र आज ईजाद किए जा रहे हैं, उनके द्वारा मनुष्य-समाज अपने विनाश की तैयारी कर रहा है। विचित्र विचित्र प्रकार की विषैली गैसें आज तैयार कर ली गई है और उनसे बचने के उपायों का भी आविष्कार साथ-साथ होता चला जा रहा है।

यह शताब्दी वैज्ञानिक आविष्कारों की शताब्दी है। अभी इस सदी का ३६ वॉ वर्ष है। यह उत्सुकतापूर्वक देखने की बात है कि इस सदी के बाकी ६१ वर्षों में और कौन-कौन से आविष्कार होते है और उनकी सहायता से मनुष्य-समाज अपना क्या बना या बिगाड़ लेता है।

साहित्य

साहित्य में बहुत कम उन्नति हुई है—भौतिकविज्ञान की दृष्टि से आज का मनुष्य अपने पूर्वजों को निस्सन्देह बहुत पीछे छोड़ आया है; परन्तु साहित्य, दर्शन या कला के सम्बन्ध में वह यह दावा नहीं कर सकता। यह बात नहीं कि इन दिशाओं में वर्तमान काल के मनुष्य ने उन्नति न की हो, परन्तु यह उन्नति साहित्य, कला और दर्शन को अधिक व्यापक और लोकप्रिय बनाने की ओर विशेषरूप से हुई है, उन्हें बहुत अधिक ऊँचाई पर ले जाने की ओर नहीं हुई। पुराने जमाने के वाल्मीकि, व्यास, होमर, कालिदास और शेक्सपीयर आदि की रचनाएँ वर्तमान युग के साहित्य से यदि बढ़ कर नहीं, तो उतर कर तो कदापि नही हैं। इस तरह प्राचीन भारतीय तथा विदेशी दर्शनकारों की कृतियाँ आज भी दर्शन-साहित्य के उज्ज्वलतम रत्न गिनी जाती हैं।

वेद की कविता—वेद में बहुत ऊँचे दर्जे की कविता और ऊँचे दर्जे के भावों का वर्णन है। उषा के सम्बन्ध में वेद कहता है—"इस उषा को उसकी माता ने बना-सजा कर और भी अधिक प्रकाशमान बना दिया है, जो उसकी ओर देखता है, वह उधर से अपनी आँख हटा नहीं सकता।"

"हे सुन्दरी उषा, तुम अनन्त काल से चली आ रही हो, तथापि तुम प्रतिदिन नए-नए रूप में पुनः-पुनः आती हो। इस तरह तुम नई और पुरानी दोनों ही हो।"

परमात्मा के सम्बन्ध में वेद कहता है—

"इन ऊँचे पहाड़ों की बरफीली चोटियाँ जिसकी महिमा को पुकार-पुकार कर कह रही हैं; यह विशाल समुद्र सम्पूर्ण नदियों समेत उछल-उछल कर, बड़ी-बड़ी लहरें लेकर जिससे मिलने को व्याकुल हो रहा है, ये विस्तृत दिशाएँ जिसकी बाहुएँ है, उस महाप्रभु के किस स्वरूप की मैं उपासना करूँ ?"

यथाशक्ति ईश्वर की स्तुति गा लाने के बाद साधक कहता है—

'एतावानस्य महिमा अतोऽज्यायाश्च पुरुषः !"

"यह सब तो उस महाप्रभु की महिमा मात्र है, वह स्वयं तो इससे भी बहुत-बहुत बड़ा है !"

प्राचीन साहित्य—साहित्य के अनेक प्रसिद्ध समालोचकों की राय है कि जितनी स्वाभाविकता बाल्मीकि, व्यास और होमर आदि के काव्यों में है, उतनी सहज स्वाभाविकता आज की कविता में भी नहीं मिलती। मध्ययुग के शेक्सपीयर, कालिदास और भवभूति आदि महाकवियों की रचनाएँ आज तक संसार की सबसे अच्छी साहित्यिक रचनाओं में गिनी जाती हैं। बल्कि अनेक समालोचकों की राय है कि उनका मुक़ाबला आजकल के साहित्यिक भी नहीं कर सकते। भारत का दर्शन-साहित्य अभी तक संसार के सर्वश्रेष्ठ दार्शनिक साहित्य में गिना जाता है। इसी तरह उन्नीसवीं सदी में पाश्चात्य दर्शन की जितनी उन्नति हुई है, उतनी बीसवीं

सदी में, अभी तक नहीं हो पाई। कविता के क्षेत्र में तो, लोगों का खयाल है कि वर्तमान संसार उन्नति की बजाय अवनति ही कर रहा है।

संस्कृत-साहित्य—भारतवर्ष के प्राचीन संस्कृत साहित्य पर हमें अभिमान है। कालिदास और भवभूति इस देश के सर्वश्रेष्ठ नाटककार हुए हैं। कालिदास का शकुन्तला और भवभूति का उत्तर रामचरित ये दोनों ग्रन्थ अमर हो गए है। इसी तरह राजशेखर, दिग्नाग आदि नाटककार भी बहुत ही श्रेष्ठ थे। कवियों में इस देश के आदि महाकवि बाल्मीकि और महाभारत-कार व्यासदेव का उल्लेख किया हो जा चुका है। संस्कृत साहित्य के मध्य युग में भारवि, भास और माघ का दर्जा बहुत ऊँचा है। उपन्यास-लेखकों में भाण, सुबन्धु और दण्डी प्रसिद्ध हैं। वैज्ञानिक साहित्य के प्रणेताओं में आर्यभट्ट, वराहमिहिर, ब्रह्मभट्ट, शुक्राचार्य, भास्करा-चार्य, वाग्भट्ट और चरक पण्डित के नाम स्मरणीय हैं। राजनीति शास्त्र के लेखकों में मनु, बृहस्पति, शुक्र और कौटिल्य अमर रहेंगे। व्यास, गौतम, कपिल, कणाद, शंकराचार्य आदि इस देश के महान विचारक और दार्शनिक हुए हैं।

प्राचीन हिन्दी-साहित्य—वर्तमान ब्रजभाषा के साहित्य का विकास १५ वीं शताब्दी से शुरू हुआ। प्राचीन हिन्दी कविता में भक्ति और सुधार भावना का प्राधान्य है। तुलसीदास, सूरदास और कबीरदास प्राचीन

हिन्दी साहित्य के सब से प्रमुख कवि हुए हैं। तुलसीदास के काव्यों में रामायण सब से प्रसिद्ध है। और यह ग्रन्थ भक्ति और आचारशास्त्र की सर्वश्रेष्ठ मध्यकालीन कृति होने के अतिरिक्त कविता की दृष्टि से भी बहुत श्रेष्ठ है। सूरदास की कविता में तन्मयता के भाव की प्रधानता है और कबीरदास रहस्यवाद का सर्वश्रेष्ठ भारतीय कवि है। आजकल रहस्यवाद की लोकप्रियता बढ़ती जा रही है, इस से भारत के प्राचीन कवियों में कबीरदास की महत्ता और भी अधिक होती जा रही है। इन कवियों के अतिरिक्त चन्दवरदाई, रहीम, हम्मीर, केशवदास, भूषण, बिहारी, वृन्द, देव आदि अन्य भी अनेक बहुत श्रेष्ठ कवि हिन्दी में हुए हैं। इनमें बिहारी और देव शृंगार रस की कविता के लिए प्रसिद्ध हैं। भूषण वीर रस की कविता के लिए। मुगल सम्राट औरंगज़ेब के ज़माने में भूषण की कविताओं ने हिन्दुओं में वीरता की भावना फूँक दी थी। महाराज शिवाजी की स्तुति में भूषण के कवित्त विशेष प्रशंसनीय हैं। इनके अतिरिक्त दादू और गुरु नानक की भक्ति-कविता का भी हिन्दी साहित्य में विशेष मान है। गुरु नानक की भक्ति-रस की कविता ने पञ्जाब के हिन्दुओं में भक्ति-भाव के साथ-साथ आत्मविश्वास का भाव भी भर दिया था।

हिन्दी की यह प्राचीन कविता ब्रजभाषा में लिखी जाती थी। तब तक खड़ी बोली का चलन नहीं था। साहित्य में केवल काव्य की ही प्रतिष्ठा थी। प्राचीन हिन्दी में उपन्यास या नाटक या तो लिखे नहीं गए अथवा वे उप-

लब्ध नहीं होते। जो कुछ भी हो, यह स्पष्ट है कि उस युग में केवल कविता और पद्यों की ही प्रतिष्ठा थी। आज हिन्दी में युगान्तर हो गया है। ब्रजभाषा का स्थान खड़ी बोली ने ले लिया है और कविता के साथ-साथ साहित्य के अन्य अंगों में भी हिन्दी उन्नति कर रही है।

साहित्य के नवीन आदर्श—मनुष्य की अन्य कृतियों के समान साहित्य में भी परिवर्तन आना आवश्यक था। मानव-समाज की अनुभूतियाँ और रुचियाँ क्रमशः बदलती जा रही हैं और स्वभावतः उनका प्रभाव साहित्य पर भी पड़ रहा है। साहित्य के आदर्श आज बदल गए हैं। पुराने युग में प्रायः ललित साहित्य (कहानी, कविता, काव्य, नाटक आदि) धनियों और राजाओं के मनोविनोद की वस्तु था, इसलिए उसमें कल्पनाओं और मनोरंजक वर्णनों की प्रधानता थी। सौन्दर्य का चित्र कल्पना की आँखों के सामने उपस्थित करना साहित्य का एक प्रमुख उद्देश्य था, यद्यपि अनेक प्राचीन संस्कृत-साहित्यज्ञ "स्वान्त. सुखाय" (अपनी आत्मा की सन्तुष्टि और सुख के लिए) तथा मोक्ष प्राप्ति (ज्ञान द्वारा) को साहित्य का ध्येय मानते थे। परन्तु बहुसंख्या का उद्देश्य अपना और पाठकों या श्रोताओं का मनोविनोद करना ही था। आज वह स्थिति नहीं रही। आज मनोविनोद का स्थान उपयोगिता ने ले लिया है और मनुष्य ललित-साहित्य द्वारा भी कुछ नए भाव, नए आदर्श और नई कल्पनाओं का चित्र देखना चाहता है। इसी कारण वास्तविकता का चित्रण वर्तमान साहित्य का महत्व-

पूर्ण ध्येय बन गया है। साहित्य में बेसिर-पैर की असम्भव कल्पनाओं को आज घृणा की दृष्टि से देखा जाता है। भाषा और शैली में भी व्यर्थ के शब्दाडम्बर अब पसन्द नहीं किये जाते। मध्य युग के साहित्यिक इन दोनों चीज़ों को बहुत पसन्द करते थे। मनोवैज्ञानिक चरित्र-चित्रण आजकल विशेष पसन्द किए जाते हैं।

कला कला के लिये—'स्वान्तः सुखाय' के प्राचीन भारतीय मत का नया रूप 'कला कला के लिये' वाला सिद्धान्त है। इसका अभिप्राय यह है कि कलाकार कला (ऐसी कृति जो दर्शक, पाठक, या श्रोताओं को रस दे सके) का निर्माण आत्मतुष्टि के लिये करता है। कला का निर्माण उसके हृदय को सन्तोष और शान्ति देता है, यही कला का उद्देश्य है और कोई उद्देश्य नहीं। इसके साथ ही, विचारकों की राय है कि, कला अपने शुद्ध रूप में कभी गन्दी, मैली, अशिष्ट या वासनापूर्ण नही हो सकती। कला परमात्मा के उस गुण की देन है, जिसे 'सौन्दर्य का उत्पादक' कहा जा सकता है, अतः वह मलिन, अशिष्ट या वासनापूर्ण हो ही नहीं सकती।

साहित्य का नोबल पुरस्कार—स्वीडन के श्री एल्फ्रेड बर्नहार्ड नोबल नाम के एक दानी पुरुष ने २७० लाख रुपयों से एक फण्ड क़ायम किया था, जिसके सूद से करीब १२० हज़ार रुपयों के पाँच पुरस्कार प्रतिवर्ष बांटे जाते हैं। रसायन, भौतिक विद्या, चिकित्सा शास्त्र, साहित्य और

अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति—इन सब के सम्बन्ध में वर्ष भर में सब से अच्छा कार्य संसार के किसी भी देश के जिन व्यक्तियों ने किया होता है, उन्हें यह पुरस्कार दिया जाता है । इन सब पुरस्कारों में साहित्य का नोबल पुरस्कार विशेष प्रतिष्ठा की चीज समझा जाता है । सन् १९१३ में भारतवर्ष के अमर कवि श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर को यह पुरस्कार मिला था । सन् १९१९ से १९३४ तक निम्नलिखित व्यक्तियों को साहित्य का यह नोबल पुरस्कार मिला है—सी० स्पिट्टलटर, नट हैमसन; अनातोले फ्रांस, जे० बैनेवण्टे, यीट्स, रेमौण्ट, बर्नर्ड शा, ग्राजिया डेलेडा, एच० जैर्जसन, सिग्रिड अण्डसैट, थौमस मैन, सिक्लेअर लूइस, एक्सल कार्लफैट, जोन गाल्सवर्दी, इवान बुनिन और पिराण्डलो लूगी ।

साहित्य की सार्वभौम पुकार—साहित्य को आजकल सम्पूर्ण विश्व की सम्पत्ति माना जाता है । वास्तव में श्रेष्ठ साहित्य की पहिचान ही यही है कि उसकी पुकार सार्वभौम होनी चाहिये । फिर भी प्रत्येक देश की अपनी अपनी परिस्थितियों के अनुसार सभी जगह विशेष-विशेष शैली और भावों का साहित्य विकसित हो पाता है । उदाहरणार्थ अठाहरवीं सदी के अन्त में रूसो और वाल्टेयर ने जिस ढंग का साहित्य फ्रांस में पैदा किया था, वैसा साहित्य उन्हीं परिस्थितियों में लिखा जा सकता था । फिर भी उस साहित्य का प्रभाव सम्पूर्ण संसार पर पड़ा ।

आजकल का भारतीय साहित्य—भारतवर्ष में आजकल जागृति का युग है। सभी क्षेत्रों में यह देश उन्नति कर रहा है। साहित्य की दृष्टि से भी भारतवर्ष का स्थान संसार के अन्य देशों के मुक़ाबले में अब उतना पिछड़ा हुआ नहीं रहा। सन् १९१३ में श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने साहित्य का नोबल पुरस्कार विजय करके भारतीय प्रतिभा का प्रमाण संसार-भर को दिया था। भारतवर्ष के अन्य भी अनेक लेखकों ने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की है।

साहित्य की दृष्टि से भारतवर्ष में पहला स्थान बंगाल का है। बंगाल ने श्री माइकेल मधुसूदन दत्त, श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय श्री द्विजेन्द्रलाल राय, श्री रमेशचन्द्र दत्त, श्री राखालदास वन्द्योपाध्याय, श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर और श्री शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय, जैसे प्रतिभाशाली लेखकों को अर्वाचीन युग में जन्म दिया। गुजराती, मराठी तथा दक्षिण की भाषाओं में भी इन दिनों अच्छा साहित्य लिखा गया है।

हिन्दी में आजकल साहित्यिक जागृति के दिन हैं। पहले-पहल हिन्दी में कविता करने का चाव बड़े जोरों से पैदा हुआ था। आजकल कहानियों का ज़माना है। आए दिन नए-नए लेखक पैदा हो रहे हैं और वे नई-नई शैलियों को अपनाने का प्रयत्न कर रहे हैं। व्यापकता और बोलनेवालों की संख्या की दृष्टि से हिन्दी, संसार की तीसरी भाषा है। नए साहित्य के लिहाज़ से यद्यपि वह

अभी तक संसार की अन्य उन्नत भाषाओं से बहुत पिछड़ी हुई है, परन्तु लक्षणों से प्रतीत होता है कि हिन्दी का भविष्य बहुत उज्ज्वल है। भारतवर्ष के प्रत्येक प्रतिभाशाली कुमार, कुमारी अथवा नवयुवक और नवयुवती का यह कर्तव्य है कि वह अपनी मातृभाषा के साहित्य को उन्नत करने का भरसक प्रयत्न करे।

(६)

हमारा प्रान्त

(पंजाब)

भारतवर्ष की सीमा पर—सैनिक दृष्टि से पंजाब हिन्दोस्तान का सब से अधिक महत्वपूर्ण प्रान्त है। यह प्रान्त यद्यपि क्षेत्रफल में काफ़ी बड़ा है, तथापि इसे हिन्दोस्तान का 'सैनिक द्वार' कहा जा सकता है, इस देश में स्थल मार्ग से जो जातियाँ आईं उन्हें पहली बाधा खैबर दर्रे पर मिलती रही। जो जातियाँ खैबर दर्रा पार करके सिन्धु नदी तक पहुँच जाती थीं, उनके लिए, सरदियों के मौसम में सिन्धु नदी पार कर सकना बहुत कठिन नहीं रहता था। सिन्धु नदी पार,करते ही वे लोग वास्तविक 'आर्यवर्त' में पहुँच जाते थे। पंजाब के उपजाऊ और समतल मैदानों में आगे बढ़ने में उन्हें कोई दिक्कत न होती थी। पंजाब के वीर क्षत्रिय विभिन्न टुकड़ियों में बँटे हुए थे, अतः किसी संगठित और विशाल सेना वाली जाति के आक्रान्ताओं के लिए पंजाबी क्षत्रियों का सामना करना बहुत कठिन नहीं होता था और वे लोग आगे बढ़ते चले जाते थे।

भारतवर्ष की युद्ध-भूमि पानीपत—पंजाब के उत्तर तथा उत्तर-पूर्व की ओर दुर्गम हिमालय है। उत्तर-पश्चिम तथा पश्चिम में हिमालय तथा सुलेमान पर्वत है। दक्षिण में अरावली पर्वत तथा राजपूताना के रेगिस्तान हैं। इस तरह पंजाब की यह उपजाऊ भूमि चारों ओर से प्रकृति द्वारा सुरक्षित है। यदि किसी जगह से आगे बढ़ा जा सकता है, तो वह जगह है, दक्षिण-पूर्व में पानीपत (अम्बाला कमिश्नरी) का मैदान। इसी कारण यह पानीपत भारतवर्ष के इतिहास में शुरू ही से प्रसिद्ध युद्ध-भूमि रहा है। पानीपत के मैदान में ही प्राचीन काल के अनेक बड़े-बड़े साम्राज्यों का उत्थान और पतन हुआ। महाभारत से लेकर सन् १७६१ तक अनेक महायुद्ध इस मैदान में लड़े गए। अनेक इतिहास-प्रसिद्ध राजवंशों के भाग्यों का निपटारा इसी भूमि में होता रहा। और पंजाब पानीपत की कुंजी है, इसलिए भारतवर्ष में प्रायः उसी शक्ति का प्राधान्य रहा, जिसका पंजाब पर अधिकार रहा।

नई परिस्थितियां—परन्तु अब परिस्थितियाँ बहुत कुछ बदल गई हैं। स्थल-मार्ग से पैदल सेनाओं के आक्रमण होने अब लगभग बन्द हो गए हैं। अभी तक उनका स्थान सामुद्रिक मार्गों ने ले रक्खा था और अब क्रमशः हवाई मार्ग सामुद्रिक मार्गों की महत्ता भी कम करते जा रहे हैं। सामुद्रिक मार्गों की दृष्टि से भारतवर्ष के पश्चिमी और उत्तर-पश्चिमी बन्दरगाहों की महत्ता बहुत अधिक थी और हवाई मार्गों की दृष्टि से कराची की महत्ता बढ़ती

चली जा रही है। फिर भी निम्नलिखित दो दृष्टियों से पंजाब की सैनिक महत्ता अभी तक कम नही हुई—

(१) पंजाब के पश्चिमोत्तर मे अफ्रीदी आदि अनेक अर्ध-सभ्य सरहद्दी जातियाँ रहती हैं। ये लोग लूट-मार को बुरा नहीं समझते। इसी तरह, इसी दिशा से, अन्य भी अनेक शक्तिशाली राष्ट्रों के आक्रमण का भय अभी तक बिलकुल नही जाता रहा। इन सरहद्दियों तथा अन्य जातियों से भारतवर्ष की रक्षा करने के लिए अभी तक पंजाब तथा सीमाप्रान्त की छावनियों में बड़ी-बड़ी सेनाएँ रक्खी जाती हैं। इससे पंजाब का सैनिकपन अभी कायम है।

(२) पंजाब का जलवायु स्वास्थ्य के लिए विशेष-रूप से लाभकर है। यहाँ जो जातियाँ आबाद हैं, उनमें बहुसंख्या के पूर्वज लड़ाई-झगड़े से घबराते नहीं थे। इन जातियों का स्वास्थ्य भी अच्छा है, अतः भारतवर्ष की सेनाओं में पंजाबियों की प्रधानता है।

पंजाब की नदियाँ—'पंजाब' पाँच जलों का देश है।' परन्तु वास्तव मे यह सात नदियों से उपयोग ले सकता है। जेहलम, चनाब, रावी, व्यास, सतलुज—ये पाँचों नदियाँ मुख्यत. पंजाब की भूमि में ही बहती हैं। सिन्धु नदी पहले एक जगह पंजाब की सीमा का काम करती है। और उसके बाद, पंजाब की सीमा छोड़ कर आगे बढ़ने से काफ़ी ऊपर ही, वह पंजाब की आखिरी हद के बीचोंबीच बहने लगती है। पूर्व की ओर यमुना नदी पंजाब

की सीमा पर बह रही है। इस तरह पंजाब के उपजाऊ और समतल मैदानों में सात नदियों के जलों का उपयोग लिया जा सकता है।

नई आबादियाँ—इतना पानी रहते हुए भी पंजाब के अनेक बड़े-बड़े मैदान अभी तक व्यर्थ ही पड़े हुए थे। पिछली चार-पाँच दशाब्दियों में पंजाब में अनेक बड़ी-बड़ी नहरें बनाई गई हैं और उनके द्वारा इन मैदानों को पानी पहुँचाया गया है। परिणाम यह हुआ है कि लाखों एकड़ नई भूमि इस योग्य निकल आई है कि वहाँ खेती-बाड़ी की जा सके। इन्हें नई आबादियाँ कहा जाता है। बहुत समय तक ये ज़मीनें परती पड़ी रही हैं, इससे इनमें फसल बहुत अच्छी होती है और आजकल ये ज़मीनें भारतवर्ष की सब से अधिक उपजाऊ ज़मीनों में गिनी जाती हैं। इन ज़मीनों में सरकार ने अनेक ऐसी जातियों को बसाया है, जो अब तक सैनिकपेशा जातियाँ समझी जाती थीं। गत महायुद्ध तथा अन्य युद्धों के सैनिकों को ये ज़मीनें इनाम के तौर पर भी दी गई हैं। इससे पंजाब की अनेक सैनिक जातियाँ अब किसान-जातियाँ बनती चली जा रही हैं।

नहरों की वृद्धि—सन् १८६८ में पंजाब में १२ लाख ७३ हज़ार एकड़ भूमि नहरों के जल से सींची जाती थी। सन् १९३० तक यह मात्रा १ करोड़ २ लाख ३९ हज़ार एकड़ तक जा पहुँची। कुओं आदि से सन् १८६८ में पंजाब को ४६ लाख १२ हज़ार एकड़ ज़मीन सींची जाती थी। अब सन् १९३० में यह मात्रा थोड़ा-सा घट कर

४५ लाख ७५ हजार एकड़ हो गई है। ये संख्याएँ इस बात की द्योतक हैं कि पंजाब में नहरों का जाल किस तेज़ी से बिछाया जा रहा है। इतने समय मे प्रान्त की सब तरह की कृषियोग्य भूमि में ५० प्रतिशत भूमि की वृद्धि करली गई है।

पंजाब की आबादी—सन् १८६८ से ले कर अब तक पंजाब की जन-संख्या में क्रमशः इस तरह वृद्धि हुई है—

सन्	आबादी
१८६८	१,६२,५०,०००
१८८१	१,६६,४०,०००
१८६१	१,८६,५०,०००
१९०१	१,९९,४०,०००
१९११	१,६९,८०,०००
१६२१	२,०६,८०,०००
१९३१	२,३५,८०,०००

हिन्दोस्तान में यूरोपियन महायुद्ध का सब से अधिक प्रभाव पंजाब पर ही पड़ा, क्यों कि जो भारतीय सैनिक फ्रांस, बेल्जियम और बसरा-बगदाद के युद्ध-क्षेत्रों में गए थे, उनमें पंजाबियों की संख्या सब से अधिक थी। परन्तु महायुद्ध के बाद, सन् १९२१ से लेकर सन् १६३१ तक इस प्रान्त में कोई विशेष अशान्ति उत्पन्न नहीं हुई, इसी से इन दस वर्षों में जन-संख्या बढ़ने का अनुपात बहुत अधिक रहा।

पंजाब के विभाग—पंजाब को मुख्यतया तीन भागों में बाँटा जा सकता है। (१) मुलतान और

रावलपिण्डो की कमिश्नरियों में मुसलमान जाटों की, जो हूणों के वंशज कहे जाते हैं, अधिकता है। ये लोग प्रायः खेती-वाड़ी का काम करते हैं। परन्तु आर्थिक दृष्टि से ये लोग अपने यहां के अन्य वंशोय मुसलमानों तथा खत्री और अरोड़े हिन्दुओं से बहुत पिछड़े हुए हैं। (२) लाहौर और जालन्धर की कमिश्नरियों में मुसलमान और सिक्खों की संख्या करीब-करीब बराबर है। परन्तु इस मध्य पंजाब की भूमि का अधिक भाग सिक्ख जाटों के हाथ में है। मध्य पंजाब के किसान उत्तर-पश्चिमी भारत के किसानों से अधिक सम्पन्न हैं। इन कमिश्नरियों में भो हिन्दू आबादी मुख्यतः अरोड़े और खत्रियों की ही है। इनकी आर्थिक दशा पहले की अपेक्षा बिगड़ती चली जा रही है। (३) अम्बाला कमिश्नरी में हिन्दू जाट किसानों की प्रधानता है। ये लोग भारतवर्ष के औसतन किसानों की अपेक्षा अधिक अच्छी हालत में हैं। यद्यपि यहां भी गरीबी बहुत अधिक है। इन के अतिरिक्त ब्राह्मण और बनिये भी, इस कमिश्नरी में काफ़ी संख्या में हैं।

जाट—पंजाब भर में करीब ९० लाख जाट हैं। उत्तर पश्चिम के जाट मुसलमान हो गए हैं, मध्य पंजाब के जाट सिक्ख हैं, पूर्वीय पंजाब के जाट हिन्दू हैं। ये सब जाट विदेशी आक्रमणकारी जातियों—हूण आदि—के वंशज कहे जाते हैं। इनके जिस्म अभी तक बहुत अच्छे हैं और इन्हें पंजाब की रीढ़ कहा जा सकता है।

पंजाब के किसान—यह ठीक है कि पंजाब के

किसानों की दशा भारतवर्ष के अन्य प्रान्तीय औसतन किसानों से अच्छी है। इसके तीन प्रमुख कारण हैं। पहला तो यह कि पंजाब में छोटे-छोटे ज़मीदारों की बड़ी संख्या है। ये लोग अपनी भूमि के स्वयं मालिक हैं, अतः उनकी दशा अच्छी होना स्वाभाविक है। दूसरा यह कि पंजाब में ज़मींदारों को फसल की आय का भाग अन्य प्रान्तों की अपेक्षा कम देने का रिवाज प्रचलित है। पंजाब की भूमि वैसे भी काफी अच्छी उपजाऊ है, इसलिए ठेके पर, या हिस्से पर काम करने वाले किसानों की आर्थिक दशा भी अपेक्षाकृत अच्छी रहती है। तीसरा कारण यह कि पंजाब का जलवायु पुष्टिदायक है, वह यहां के किसानों को अधिक कर्मण्य बनाता है और उनकी दरिद्रता का प्रभाव उनके शरीर पर नहीं पड़ने देता।

मध्यवर्ग के लोग—पंजाब छोटे-छोटे ज़मींदारों का प्रान्त है, इसका एक परिणाम यह भी हुआ है कि पंजाब में मध्यश्रेणी के लोगों की संख्या अन्य सभी प्रान्तों के औसतन् अधिक है। युक्तप्रान्त, विहार आदि में एक ओर बड़े-बड़ धनी लोग हैं, जिनकी आय हज़ारों लाखों में है, दूसरी ओर वहां इतने गरीब किसान हैं, जिनके पास सारी उम्र में १००) रुपया भी नही जुड़ पाता। पंजाब के किसान, बहुत बड़ी संख्या में ज़मीदार किसान हैं, इससे यहां बहुत बड़े अमीरों की संख्या तो निस्सन्देह कम है, परन्तु मध्यवर्ग की श्रेणियाँ यहां सभी प्रान्तों से अधिक हैं और आजकल के संसार में मध्य श्रेणियों की महत्ता बहुत अधिक बढ़ गई है।

किसानों कर्ज़—पंजाब के किसानों पर भी कर्ज़े का बहुत बोझ रहता है और यह बोझ निरन्तर बढ़ता ही जाता है। सन् १९२१ में पंजाबी किसानों पर ६० करोड़ रुपयों का कर्ज था। सन् १९३० में वह कर्ज़ बढ़ कर १ अरब ३५ करोड हो गया। हाल ही में पंजाब सरकार ने जो साहूकारा कानून बनाया है, उससे कर्ज़दार किसानों को बहुत बड़ी सुविधाएं मिलगई हैं और साहूकारों पर बहुत से बन्धन लगा दिए गए हैं। सूद की अधिकतम मात्रा भी निश्चित कर दी गई है।

वास्तव मे पंजाबी किसानों पर कर्ज़ का बोझ चाहे कितना भी क्यों न हो, वर्तमान कानूनों के अनुसार वह कर्ज़ उनसे बहुत कम वसूल किया जा सकता है। उनकी जमीनें, उनके बैल आदि तथा उनके घर का सामान कर्ज़ अदा करने के लिए ज़ब्त नहीं किए जा सकते।

पंजाब-भूमि बिक्री कानून (Land Alienation Act)—पंजाब में बहुत समय से एक कानून प्रचलित है, जिसके अनुसार यहां काश्तकार जातियों से वे जातियाँ जमीनें नहीं खरीद सकती, जो काश्तकार नहीं हैं। कर्ज़ आदि की दशा में इन काश्तकार जातियों की ज़मीन न तो बेची जा सकती है और न ज़ब्त ही की जा सकती है। पंजाब के किसानों से ज़मीनें क्रमशः छिनती जा रही थी, इसी बात को रोकने के लिए यह कानून बनाया गया था। इस कानून के सिद्धान्त तो दोषपूर्ण नहीं, परन्तु इसमें जातियों का जो विभाग कानून द्वारा ही निश्चित कर दिया

गया है, वह अवश्य दोषपूर्ण हो गया है । जब यह कानून बना था, तब अनेक जातियाँ ऐसी थी, जो काश्तकार नहीं थी, अब वे काश्तकार बन गई हैं और तब की अनेक काश्तकार जातियाँ अब किसान नहीं रहीं। खेतीबाड़ी में गैर-काश्तकार जातियों के व्यक्तियों का प्रवेश इस कानून के रहते हुए बहुत कठिन हो गया है। यदि इस कानून के लिए जातियों का वर्गीकरण करने के उद्देश्य से पंजाब सरकार एक निष्पक्षपात और स्थायी ट्रिब्यूनल बना दे, तो पंजाब की सर्वसाधारण जनता का बड़ा उपकार हो। अथवा लाहौर हाईकोर्ट को भी इस सम्बन्ध के अधिकार दिए जा सकते हैं।

पंजाब के नगर—अन्य भारतवर्ष के समान पंजाब में भी नगरों की जन-संख्या बढ़ती चली जा रही है। इस समय पंजाब में पाँच शहर इस तरह के हैं, जिनकी आबादी एक लाख से ऊपर है—लाहौर, अमृतसर, मुल्तान, रावलपिण्डी और स्यालकोट। सन् १८८१ से १९३१ तक के ५० सालों में इन नगरों की आबादी इस प्रकार बढ़ी है—

	सन् १८८१	सन् १९३१
लाहौर	१,४९,३६९	४,२९,७४७
अमृतसर	१,५१,८९६	२,६४,८४०
मुल्तान	६२,६७४	१,१९,४५४
रावलपिण्डी	....	१,१९,२८४
स्यालकोट	४५,७६२	१,००,९७३

(कतिपय अन्य नगर)

जालन्धर	५२,११९	८९,०३०
अम्बाला	५६,४६३	८६,५९२
फीरोज़पुर	३८,५७०	६४,६३४

शहरों की आबादी बढ़ने के कारण—काम-काज की तलाश और शिक्षाप्राप्ति के लिए गाँवों के निवासी शहरों में आते हैं। जो बालक बचपन ही से पढ़ने-लिखने के लिए शहरों में आकर रहने लगते हैं अथवा कालेज की उच्चशिक्षा प्राप्त करने के लिए बड़े शहरों में जाते हैं, उनका जी फिर अपने गाँव में जाकर बसने को प्रायः नहीं करता। वकील, डाक्टर, एञ्जीनियर आदि लोगों की रोज़ी अभी तक गांवों में नहीं चल सकती, इस से वे लोग अपना केन्द्र शहरों को बनाते हैं। मध्य श्रेणियोंके अनेक ग्रामीण किसान आजकल अपने पुत्रों को ऊँची शिक्षा देने का प्रयत्न करते हैं, और वे शिक्षित नवयुवक प्रायः अपने गांव को सदा के लिए छोड जाते हैं।

वर्तमान युग की सभ्यता में शहरों की मुख्यता वैसे भी बहुत बढ़ गई है। प्रत्येक कार्य का केन्द्र शहर ही बन सकते हैं। विशेषकर व्यवसाय और व्यापार की दृष्टि से शहरों की महत्ता यों भी अधिक है। शहरों की तड़क-भड़क ग्रामीण युवकों को आसानी के साथ अपनी ओर खींच लेती है। शहरों में पहुँच कर वे अनुभव करने लगते हैं कि जैसे उन्हें अब आज़ादी मिल गई है।

गांवों पर इस प्रवृत्ति का प्रभाव—परिणाम यह हो रहा है कि गांवों में से समझदार लोगों की संख्या कम

होती चली जा रही है। जो लोग ज़रा भी उन्नति कर लेते हैं, वे फिर गांवों में रहना पसन्द नहीं करते। इससे गांवों को स्टैण्डर्ड और भी नीचा हो जाता है। क्रमशः शहरों और गाँवों के बीच में भेद की एक दीवार-सी खड़ी होती जा रही है, जिसे किसी भी दृष्टि से अच्छा नहीं समझा जा सकता। यह प्रवृत्ति यहां तक बढ़ रही है कि एक मैट्रिक पास नवयुवक, जिसके मां-बाप के पास ३०,३५ एकड़ ज़मीन भी मौजूद है, गांव में रहना और अपनी ज़मीन पर काम करना प्राय पसन्द नहीं करेगा। वह उसकी अपेक्षा किसी शहर में जाकर २०,२२ रुपये मासिक पर क्लर्क हो जाना अधिक पसन्द करेगा। इस प्रवृत्ति से जहां गांवों की उन्नति में बाधा पहुंच रही है, वहां देश के नौजवानों के स्वास्थ्य और चरित्र पर भी बुरा प्रभाव पड़ रहा है।

गांवो की महत्ता बढ़ाने के प्रयत्न—पंजाब सरकार पिछले वर्षों से ग्रामों की महत्ता बढ़ाने का जो प्रयत्न कर रही है, उस का सब से पहला कार्य गांवों में पुस्तकालय और वाचनालय स्थापित करना है, जिससे गांवों के पढ़े-लिखे लोग अपने गांव में एक ऐसा वातावरण अनुभव कर सकें कि गांव में रहते हुए भी उन के बौद्धिक विकास को बाधा नहीं पहुँचती। यदि गांवों का रहन-सहन कुछ हद तक सुधर जाय, तो पढ़े-लिखे युवकों को गांवों में रहना अखरेगा नहीं। इधर शहरों में रहनेवाली जनता का ध्यान भी, कुछ हद तक, ग्रामों की उन्नति की ओर आकृष्ट हुआ है।

भारतवर्ष के नए शासन विधान में वोटरों की संख्या बहुत अधिक बढ़ा दी गई है। गांवों के वोटरों की संख्या अब इतनी अधिक हो गई है कि शहरों में रहने वाले उमीदवारों को अपनी सफलता के लिए यह आवश्यक प्रतीत होने लगा है कि वे गांव वालों के साथ अपना सम्पर्क बनाए रक्खें। उस प्रवृत्ति से, उमीद है कि, गांवों की महत्ता बढ़ती जायगी और देश के पढ़े-लिखे नौजवान अब अपने गांवों की उन्नति करने का प्रयत्न करने लगेंगे।

शिक्षा की उन्नति—पंजाब में अँगरेज़ी राज्य उन्नीसवीं सदी के मध्य में स्थापित हुआ था। यानी मद्रास और बंगाल में अंगरेजी राज्य की स्थापना होने के लगभग एक सौ साल बाद। इसी से स्वभावत. पंजाब में अँगरेजी शिक्षा का प्रारम्भ भी बंगाल, मद्रास की अपेक्षा बहुत देर में हुआ। फलतः अँगरेजी शिक्षा की दृष्टि से पंजाब अन्य अनेक प्रान्तों से पिछड़ा हुआ है। पंजाब में सन् १९३२ में स्कूलों और कालेजों की कुल संख्या १९४६९ थी। इनमें कुल मिलकर १३,१३,३७६ विद्यार्थी पढ़ रहे थे। अस्वीकृत शिक्षणालयों की संख्या ६१६२ थी। प्रान्त भर में ४१ इण्टर कालेज थे। पंजाब में करीब ३॥ करोड़ रुपया शिक्षा विभाग पर प्रति वर्ष व्यय किया जा रहा है। इससे करीब ५५ प्रतिशत रुपया सरकारी आय में से खर्च किया जाता है और बाकी अन्य स्रोतों से।

पंजाब की राजधानी—पांच नदियों के इस प्रान्त की राजधानी लाहौर, आबादी के लिहाज़ से भारतवर्ष का

पांचवां नगर है। गत १० वर्षों में लाहौर की आबादी में ५६ प्रतिशत की वृद्धि हुई थी। यह तथ्य इस बात का सूचक है कि लाहौर की जन-संख्या और महत्ता किस तेज़ी के साथ बढ़ रही है। यह एक स्मरणीय बात है कि कल-कारखानों आदि की दृष्टि से अभी तक लाहौर मद्रास, कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली, यहां तक कि नागपुर और कानपुर से भी पिछड़ा हुआ है, फिर भी लाहौर की जनसंख्या में इस अनुपात से वृद्धि होना विशेषरूप से आश्चर्य-जनक है। वास्तव में बात यह है कि लाहौर अपने प्रान्त का वास्तविक केन्द्र है।

शिक्षा, न्याय, प्रकाशन कार्य, व्यापार, व्यवसाय आदि सभी दृष्टियों से लाहौर सम्पूर्ण पंजाब का केन्द्र है। भारतवर्ष के किसी अन्य प्रान्त की राजधानी को यह अभिमान प्राप्त नहीं कि उसे अपने प्रान्त का इतने सच्चे अर्थों में वास्तविक केन्द्र कहा जा सके। महाराष्ट्र का वास्तविक केन्द्र बम्बई नहीं, पूना है और गुजरात का अहमदाबाद। युक्त-प्रान्त में लखनऊ, इलाहाबाद और आगरा तीनो की विशेष महत्ता है। कलकत्ता बंगाल का केन्द्र कहा जा सकता है, परन्तु वहां करीब ५ लाख आबादी ग़ैर-बंगालियों की है। उधर पूर्वीय बंगाल का केन्द्र ढाका है। मद्रास अनेक हिस्सों में विभक्त है और बिहार को गंगा नदी ने दो ऐसे भागों में बांट दिया है कि वहां सारे प्रान्त का कोई एक केन्द्र रह ही नहीं सकता। पंजाब के केन्द्र लाहौर के सम्बन्ध में यह बात निस्सं-कोच होकर कही जा सकती है कि जो कुछ लाहौर सोचता है, वही कुछ सारा पंजाब सोचने लगता है और जो कुछ

लाहौर करता है, वही कुछ सारा पंजाब करने लगता है। यही कारण है कि अकेले लाहौर से जितने दैनिक पत्र निकलते हैं उतने दैनिक पत्र, कलकत्ता को छोड कर, भारतवर्ष के और किसी नगर से नहीं निकलते और कलकत्ता की आबादी लाहौर से ३ गुना से भी अधिक है।

पंजाब की अभिवृद्धि—निम्नलिखित तालिका से पंजाब की आर्थिक समृद्धि का अन्दाजा आसानी के साथ लग सकेगा—

वर्ष	रेलवे लाइन (मीलों में)	नहरें (मीलों में)	पक्की सड़कें (मीलों में)	उपजाऊ भूमि (एकड़)	लगान (रुपये)
१८८२-७३	४१०	२,७४४	१०३६	१८८ लाख	२०१ लाख
१८८२-८३	६००	४५८३	१९६७	२३४ ,	२०६ ,,
१८९२-९३	१७२५	१२,३६८	२१८२	२६७ ,,	२२३ ,,
१९०२-०३	.....	१६,८९३	.. .	२९८ ,,	२३० ,,
१९११-१३	४०००	१६,९३५	२६१४	२९० ,,	३६० ,,
१९२२-२३	४४४१	१९ ४६४	२९३८	३०० ,	४०० ,,
१९३२-३३	५५००	१९,६०१	३२०४	३०९ ,,	४२८ ,,

कुछ गणनाएँ

उपज की संख्याएँ—इन दिनों पंजाब की भूमि मे निम्नलिखित उपजें प्रतिवर्ष औसतन बोई जाती हैं—

गेहूं	९३,३४,००० एकड़
चना	४४,६०,०० ,,
ज्वार	१०,००,००० ,,
बाजरा	३३,१८,००० ,,
रूई	२१,७४,००० ,,

पंजाब में काश्तकार और ग़ैर काश्तकारों को संख्याएँ- 'पंजाब लैण्ड एलीएनेशन एक्ट' के अनुसार पंजाब में—

जाति	काश्तकार	गैर काश्तकार	योग
हिन्दू	२२,११,०००	४३,६८,०००	६५,७९ ०००
मुसलमान	६७,२८,०००	४१.१६,०००	१,१४,४४,०००
सिक्ख	१५,०८,०००	७,८४,०००	२२,९२,०००
योग	१,०४,४७,०००	१,०२,३८,०००	२,०६,८५,०००

जातियों के लोग हैं, ये संख्याएँ सन् १९२१ की जन-गणना के आधार पर हैं।

अ ावस २।)　　　　　　　　　　　　　　चन्द्रकला ।।।=)

भय का राज्य १)

[लेखक—चन्द्रगुप्त विद्यालंकार]

"श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार में कहानी लिखने की असाधारण प्रतिभा है। उनकी कल्पना ऊर्वरा है, भाषा में जीवन है। इस संग्रह की सभी कहानिया बहुत उत्तम हैं।"—ट्रिब्यून (लाहौर)

"श्रीयुत चन्द्रगुप्त विद्यालंकार में जीवित कल्पना शक्ति और विशाल सहानुभूति की भावना है। उनकी शैली स्वाभाविक है, वह कहीं भी बंध कर नहीं चलती। . हमे विश्वास है कि पाठक इन कहानियों को अत्यधिक पसन्द करेंगे।"—लीडर (अलाहाबाद)

"चन्द्रगुप्तजी की कल्पना ऊर्वरा है, भाषा में भाव है, चित्रण में रंग है, कहने में ढङ्ग है।"—जागरण (बनारस)

"हिन्दी भाषा के कहानी साहित्य के विकास में श्री चन्द्रगुप्त जी का ऊंचा स्थान रहेगा।"—कर्मवीर (खण्डवा)

" हिन्दी के आठ दस सर्वोच्च कोटि के कहानी लेखकों मे चन्द्रगुप्त जी का प्रमुख स्थान है।"—चित्रपट (दिल्ली)

'चन्द्रगुप्त जी की कहानियां भावपूर्ण और गम्भीर होने के साथ रोचक भी खूब हैं। अपने एक वक्तव्य में लेखक ने लिखा है—'मुझे इस बात का अभिमानपूर्ण विश्वास है कि पाठक मेरी कहानियों को पसन्द करेंगे।' इस अभिमान के वह पूरे अधिकारी हैं।"

—विश्वमित्र (कलकत्ता)

"हिन्दी जगत् चन्द्रगुप्तजी पर नाज़ कर सकता है और वस्तुतः वह हिन्दी जगत् के लिए गौरव हैं।"—विशाल भारत (कलकत्ता)

"चन्द्रगुप्तजी से हिन्दी को बहुत कुछ आशा है।"

(सरस्वती-(अलाहाबाद)